॥ ओ३म् ॥

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

टंकारा समाचार

(श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट का मासिक पत्र)

अगस्त, 2014 वर्ष 17, अंक 8
विक्रमी सम्वत् 2071
एक प्रति का मूल्य 10/- रुपये

दूरभाष (दिल्ली) : 23360059, 23362110
दूरभाष (टंकारा) : 02822-287756
ई-मेल : tankarasamachar@gmail.com

वार्षिक शुल्क 100 रुपये
कुल पृष्ठ 20

राष्ट्रीय स्वाभिमान को जगाया आर्य समाज ने

❒ डा. भवानीलाल भारतीय

उन्नीसवीं शताब्दी ने भारत में नवजागरण के सूर्य को उदय होते देखा। राजा राम मोहनराय, देवेन्द्र नाथ ठाकुर, केशवचन्द्र सेन तथा गुजरात के दयानन्द सरस्वती ने यदि सामाजिक और धार्मिक सुधारों की अलख जगाई तो बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय ने आनन्द मठ जैसा प्रथम राजनैतिक उपन्यास लिखकर देशवासियों को वन्दे मातरम का राष्ट्रीय गीत दिया। पंजाब, संयुक्त प्रान्त, राजस्थान, बिहार, महाराष्ट्र में आर्य समाज के संस्थापक दयानन्द सरस्वती ने निरन्तर भ्रमण, वाणी एवं लेखन के द्वारा देशवासियों में राष्ट्रीय स्वाभिमान को जगाया। पूर्वाग्रह युक्त इतिहासकारों ने इस नवीन जागृति को पश्चिम की देन कहा है और अंग्रेजी शिक्षा को राष्ट्रीय भावों का उद्भावक माना है। इसके विपरीत राम विलास शर्मा जैसे विद्वानों का मत है कि दयानन्द द्वारा प्रचारित राष्ट्रवाद शत प्रतिशत भारत के गौरवपूर्ण अतीत से प्रेरणा लेता था।

अंग्रेजों द्वारा लिखे गए इतिहास ने इस भ्रान्ति को जन्म दिया कि पश्चिमी शक्तियों के आगमन से पहले इस उप महाद्वीप (वे भारत को एक देश न मान कर सब कान्टीनेंट कहते थे) के निवासी मूर्ख, अशिक्षित, अंध विश्वासों तथा जड़ रूढ़ियों की जकड़न में फंसे लोगों ने जिन्हें शिक्षा, संस्कार तथा उन्नति का मार्ग यूरोपियन जातियों और विशेषकर अंग्रेजों ने दिखाया। नव जागरण के प्रमुख सूत्रधार दयानन्द ने बताया कि भारत तो आरम्भ से ही विश्व मानवता को एकता, सत्य, अहिंसा आदि नैतिक मूल्यों का पाठ पढ़ाने वाला जगद् गुरु रहा है। उन्होंने भारत को स्वर्णभूमि कहा तथा मनु के एक श्लोक को उद्धृत कर यह प्रचारित किया कि विगत काल में अन्य देशों के जिज्ञासु छात्र भारत में आकर आचार एवं नैतिकता का पाठ सीखते थे।

सच पूछें तो दयानन्द ने आर्य समाज के स्थापना वर्ष 1875 में अपना प्रमुख ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश लिखा और उसमें सुराज्य की तुलना में स्वराज्य का महिमा मण्डन किया। उनकी मान्यता थी कि विदेशी राज्य चाहे कितना ही मतनिरपेक्ष (सैकुलर) होने की घोषणा करे वह माता-पिता की भांति अपनी शासित प्रजा के प्रति स्नेह व्यवहार क्यों न बनाए तथा न्याय युक्त शासन कर दम्भ करे, स्वराज्य (अपना शासन) की तुलना में कभी वरीय नहीं हो सकता है और न ग्राह्य। उनका यह कथन सम्भवतः महारानी विक्टोरिया के 1858 में प्रसारित उस घोषणा को ध्यान में रखकर कहा गया था जिसमें 1857 की गतिविधियों की पृष्ठभूमि में रानी ने भारत को भविष्य में सुशासन देने का वायदा किया था। दयानन्द की यह सदिच्छा केवल वाणी विलास ही नहीं था। उनके अनुयायियों ने उसे क्रियान्वित किया। दयानन्द स्वयं स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग तथा आर्थिक स्वावलम्बन के लिए स्वदेशी कला कौशल को अपनाने के पक्षपाती थे।

स्वामी दयानन्द को देशवासियों की गरीबी का भरपूर अहसास था। जब विदेशी शासन ने नमक जैसी जनोपयोगी वस्तु के उत्पादन पर प्रतिबन्ध लगाकर नमक का कारोबार अपने हाथ में ले लिया। (राजस्थान में सांभर, डीडबाना तथा पंचपद्रा आदि नामक उत्पादन के संस्थानों पर सीधे ब्रिटिश हुकूमत का अधिकार था) तो दयानन्द ने अपने ग्रन्थ में इस तानाशाही कदम की निंदा की और इसे जनविरोधी बताया। आज के नक्सलवादियों का सरकार पर आरोप है कि जंगलों में उत्पन्न साधनों का प्रयोग जनजातियों के लोगों को करने नहीं दिया जाता और यह अशान्ति का कारण बनता है। दयानन्द भी इस शिकायत से शत-प्रतिशत सहमत

(शेष पृष्ठ 17 पर)

शान्ति कीजिये प्रभु त्रिभुवन में, शान्ति राष्ट्र निर्माण सृजन में

'टंकारा समाचार' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

कोटा में श्री पूनम सूरी जी का अभिनन्दन

आम जन को यज्ञ से जोड़ें-पूनम सूरी

आर्य समाज का प्रचार प्रसार कर आमजन को यज्ञ के महत्व की जानकारी दें तथा उन्हें यज्ञ कार्यक्रमों से जोड़ें। उक्त विचार डी.ए.वी. कॉलेज प्रबन्ध कार्यसमिति के चैयरमैन श्री पूनम सूरी ने डी.ए.वी. स्कूल में आर्य समाज कोटा जिला सभा के प्रतिनिधिमण्डल से शिष्टाचार भेंट में कहे। उन्होंने कहा कि डी.ए.वी. विद्यालयों में आर्य संस्कारों को बढ़ावा देने के लिए डी.ए.वी. स्कूलों के सभी प्राचार्यों एवं अध्यापकों को यज्ञ करने का प्रशिक्षण दिया गया है। राष्ट्रोत्थान में आर्य विचारधारा की महत्वपूर्ण भूमिका होगी।

इस अवसर पर आर्य समाज जिला सभा के प्रतिनिधिमंडल जिसमें जिला प्रधान अर्जुनदेव चड्ढ़ा, जिलामन्त्री कैलाश बाहेती, कोषाध्यक्ष जेएस दुबे, पूर्व उपप्रधान रामप्रसाद याज्ञिक, डॉ. वेदप्रकाश गुप्ता ने डी. ए.वी. स्कूल में आर्य शिरोमणि पूनम सूरी को राजस्थानी साफा पहनाकर मोतियों की माला व गायत्री मंत्र से सुसज्जित रेशमी पटका पहनाकर स्वस्ति मंन्त्रोच्चार के साथ सम्मान किया। श्री पूनम सूरी को जिला सभा की ओर से ओ३म् का स्मृति चिन्ह भेंट कर सम्मानित किया गया।

इस अवसर पर श्रीमती मणि सूरी, आर्य समाज के प्रतिनिधि व डी.ए.वी. के रीजनल डायरेक्टर एमएल गोयल, मैनेजर राजेश कुमार, प्रिसींपल एके लाल, प्रिंसीपल श्रीमती सरिता रंजन गौतम कोटा, अशोक कुमार शर्मा जयपुर, अन्जू उतरेजा गढ़ेपान आदि भी उपस्थित थे।

आर्य समाज के जिला प्रधान अर्जुनदेव चड्ढा ने श्री पूनम सूरी को कोटा आर्य जिला सभा द्वारा किये जा रहे धार्मिक, आध्यात्मिक और सामाजिक कार्यों की जानकारी दी।

दयालु बन इंसान

(आदरणीय श्री पूनम सूरी जी से हुई चर्चा पर आधारित-सम्पादक)

ईश्वर के गुणों की व्याख्या करते समय हम ईश्वर को दयालु कहते हैं, और उसकी दया मांगते हैं। परन्तु हम भूल जाते हैं कि ईश्वर की सच्ची स्तुति ईश्वर के गुणों को स्मरण करना नहीं अपितु इन गुणों को अपने पूर्ण पुरुषार्थ के साथ अपने जीवन में धारण करने की प्रार्थना करना होता है। इस कारण यह हमारा परम दायित्व हो जाता है कि हम ईश्वरीय गुण दयालुता को अपने जीवन में धारण करके दूसरों पर दया दिखायें। जिस प्रकार ईश्वर प्रदत्त समस्त ऐश्वर्य जैसे चन्द्रमा की शीतलता, सूर्य का प्रकाश, पृथ्वी के खनिज वनस्पतियां, जल, वायु आदि विश्व के समस्त प्राणियों के लिए ईश्वरीय दयालुता के रूप में सहजता से उपलब्ध है ठीक उसी प्रकार हमें भी सभी के साथ समान रूप से दयालुता का व्यवहार करना चाहिए। ईश्वरीय न्याय व्यवस्था में भी दया का सम्मिश्रण होता है ठीक उसी प्रकार का व्यवहार हमें भी करना चाहिए।

जब हमें इस ईश्वर की दया की आवश्यकता होती है तो हम उससे दया की भीख मांगते हैं परन्तु यदि कहीं किसी को हमारी दया वा सहानुभूति की आवश्यकता हो तो हम अपने दोनों कान बंद कर लेते हैं। हमें जीवन में दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिए जैसा हम दूसरों से अपने लिए अपेक्षित करते हैं। इसलिए यदि हम ईश्वर से दया की याचना अपने लिए करते हैं तो हम भी जीवन में दूसरों पर दया करना सीखें। दया का अर्थ है मनसा, वाचा, कर्मणा किसी प्रकार से किसी को कष्ट ना पहुंचाना अर्थात मन से वाणी से और कर्म से सदा परोपकार करना। दयालुता को सबसे बड़ा धर्म बताते हुए लिखा है

जिस तरह से हो सके उस प्यारे प्रभु को याद कर।
आ के दुनिया में न अपनी जिन्दगी बरबाद कर॥
जाल माया का बिछा है जिसमे तेरा मन फंसा।
जल्दी अपने आप को इस कैद से आजाद कर॥
ईश्वर ने तुझको दौलतमन्द घर पैदा किया।
अपनी दौलत से गरीबों की भी कुछ इमदाद कर॥
हाथ-क्यों फैलाता है गैरों के आगे जा के तू।
जिसने पैदा है किया उसके आगे फरियाद कर॥

- मिलाप अखबार से साभार

दूसरों पर दया से बढ़कर कोई धर्म नहीं और पर पीड़ा के समान कोई पाप नहीं है। जो केवल दया की भावना से प्रेरित होकर परोपकर के सेवा कार्य करते हैं उन्हें ईश्वरीय न्याय व्यवस्था के अनुसार सुख आनन्द की प्राप्ति होती है। महर्षि दयानन्द ने भी संसार के उपकार को मुख्य उद्देश्य बतलाया है। देव दयानन्द तो स्वयं ही दया का अथाह सागर थे जिन्होंने अपने हत्यारे जहर देने वाले रसोइये को दया दिखाते हुए धन देकर भाग जाने को कहा था। महर्षि दयानन्द ने अपने हत्यारे को छोड़ देने के लिए कहा था "इसे छोड़ दो, मैं संसार को कैद कराने नहीं आया, अपितु मुक्त करवाने आया हूं।" क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष आदि समस्त बुराइयां निरन्तर दयालुता के व्यवहार से समाप्त हो जाती हैं। दयालुता के व्यवहार से शक्ति, प्रसन्नता और सन्तोष प्राप्त होते हैं। समाज आपस में बंधा है। यदि मनुष्यों में दयालुता समाप्त हो जाये तो क्रोध लोभ मोह आदि से उत्पन्न भाव के कारण समाज में विघटन की स्थिति पैदा हो जायेगी। दयालु होना सबसे बड़ी दौलत है। दया धर्म की जननी है।

धन से भी अधिक मूल्यवान क्या?

कल्पना करें कि एक ऐसा बैंक है जो प्रतिदिन आपके खाते में 86400/- प्रतिदिन जमा कर देता है और आपके सामने एक शर्त रखता है कि आपको इसे अगला दिन आरम्भ होने से पूर्व पूरा खर्च करना है। अगर आप पूरा खर्च न कर सकें तो बचे पैसे बैंक वापस ले लेगा और दूसरे दिन प्रातः फिर उतनी ही राशि आपके खाते में पुनः जमा कर दी जायेगी। पिछले दिन की बची राशि अगले दिन के खाते में नहीं होगी।

आप क्या करेंगे? सामान्यतः ऐसा माना जायेगा, आप उसी दिन सारे के सारे पैसे खर्च कर देंगे।

विचार करें कि क्या ऐसा ही एक बैंक हम सबके पास नहीं है? और उस बैंक में हमारा खाता भी है और बैंक का नाम है ''समय''। प्रतिदिन भोर फूटते ही हमारे खाते में 86400 सेकेण्ड जमा कर दिये जाते हैं और रात्रि होते ही बचे हुए सेकेण्डों को निकाल लिया जाता है।

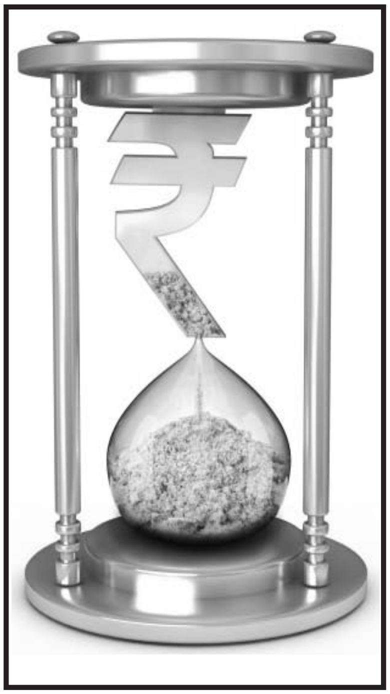

अगर हम इस काल्पनिक उदाहरण का और विवेचन करें तो यूं कहा जायेगा कि अपने सारे दिन में जो समय आपने सत्कर्मों में व्यतीत नहीं किये वह समय बेकार चला गया समझो और वह समय आपके लिए व्यर्थ ही है।

उपरोक्त उदाहरण से हम सीख लें कि समय का अधिक से अधिक सदुपयोग करना है, सदुपयोग अपनी सेहत के लिए, सदुपयोग अपनी प्रसन्नता के लिए, सदुपयोग अपनी सफलता के लिए, इससे बढ़कर सदुपयोग अपने लिए ही नहीं दूसरों के लिए भी, दूसरों का दुःख निवारण करके, दूसरों का सहयोग करके कोई ऐसा भी कार्य जिसमें अपना निजी स्वार्थ न हो, अपितु समाज धर्म और राष्ट्र का हितकर हो, उस कार्य में समय को लगाओ, क्योंकि बीता हुआ समय कल फिर आपके पास नहीं आयेगा। अगर उपरोक्त उदाहरण को मैं एक तरह से कहूं तो 24 घंटे में 8 घंटे रात्रि विश्राम के काट दिये जायें तो 16 घंटे हमारे पास शेष बचते हैं। इन 16 घंटों का तात्पर्य 57600 सेकेण्ड। अब आपको नहीं लगता कि समय और कम रह गया। इन 16 घंटों में से 2 घंटे भोजन इत्यादि एवं दैनिक नित्य कर्म हेतु निकाल देवें, 3 घंटे प्रातः एवं सायं भ्रमण हेतु एवं अन्य यातायात के साधन से एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने हेतु निकाल देवें। अब आपको नहीं लगता कि समय और भी कम रह गया। इस तरह प्रति पल समय हाथ से निकलता जा रहा है। इसे अपने आत्मिक आनन्द हेतु प्रभु भक्ति में लगायें। यज्ञ इत्यादि उच्चतम कर्मों में इस समय को लगावें। कल तक आपके पास कुछ न बचेगा। अपने वर्तमान को पूरा-पूरा जियें, जिसे खुशी से, उल्लास से आत्मविश्वास से, लेकिन आत्मिक आनन्द तभी सम्भव है जब आप मैं, मेरा और मेरे से ऊपर उठकर हम, हमारा और हमारे पर सोचना आरम्भ कर देंगे। किसी दार्शनिक ने बहुत अच्छा लिखा है कि जीवन को अगर जीना है तो **''सबके लिए एक और एक के लिए सब''** का सूत्र बहुत उपयोगी है और यह सूत्र परिवार, समाज, संगठन और राष्ट्र के लिए विचारें तो कितना महत्वपूर्ण लगता है। यह सूत्र किसी संगठन को मजबूत बनाने में रामबाण का कार्य कर सकता है? आज हमें इस सूत्र की बहुत आवश्यकता है। किसी एक व्यक्ति की परेशानी सबकी और सबकी परेशानी किसी एक व्यक्ति की धारणा किसी एक परिवार में आ जाये तो परिवार संगठित सूत्र में बंध जायेगा। आज संयुक्त परिवार टूटते जा रहे हैं। लोगों में अकेला रहने की भावना पाश्चात्य सभ्यता की होड़ में बढ़ती जा रही है। बुजुर्ग आँख के कांटे हो गए हैं। धार्मिक मान्यतायें पिछड़ी सोच मानी जाने लगी हैं। उपरोक्त सूत्र अगर परिवार के सभी सदस्यों की दैनिक आदतों में आ जायें तो कई प्रतिशत पारिवारिक दुःखों का अन्त हो सकता है। कल्पना करें।

समय का मूल्य कुछ निम्नलिखित प्रकार से भी आंका जा सकता है- (1) एक वर्ष का मूल्य उस विद्यार्थी से पूछें जो कक्षा में फेल हो गया हो। (2) एक माह का मूल्य उस माँ से पूछो जिसने आठ माह के बालक को जन्म दिया हो। (3) एक सप्ताह का मूल्य साप्ताहिक पत्रिका के सम्पादक से पूछो। (4) एक घंटे का मूल्य उस व्यक्ति से पूछो जो किसी का इन्तजार कर रहा हो। (5) एक मिनट का मूल्य उस व्यक्ति से पूछो जिसकी अभी-अभी गाड़ी छूट गई हो। (6) एक सेकेण्ड का समय उस व्यक्ति से पूछो जो एक भयंकर दुर्घटना में अभी-अभी बचा हो। (7) 1 मिली सेकेण्ड का मूल्य उस ओलम्पिक खिलाड़ी से पूछो जो उस कारण स्वर्ण पदक की अपेक्षा रजत पदक का विजेता हो।

इसलिए आपसे प्रार्थना है कि अपने दिन के एक-एक पल को जियें और इसलिए भी कि इस एक-एक पल के किये गये कर्मों का लेखा-जोखा किसी एक बड़े बैंक में लिखा जा रहा है। याद रखें समय किसी की प्रतीक्षा नहीं करता। कल जो बीत गया इतिहास थां आने वाला कल एक अनिश्चितता है। आज का दिन एक उपहार है, तभी तो इसे वर्तमान कहते हैं। किसी ने क्या खूब कहा है? 'समय बड़ा बलवान' क्या आपको नहीं लगता कि 'समय बड़ा मूल्यवान'।

अजय टंकारावाला

टंकारा में बोधोत्सव 2015 का आयोजन

आर्य जनों को यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता होगी कि प्रतिवर्ष की भांति आगामी वर्ष महर्षि दयानन्द जन्म स्थान टंकारा में शिवरात्रि के पावन पर्व पर भव्य ऋषि बोधोत्सव का आयोजन सोमवार, मंगलवार, बुधवार 16, 17, 18 फरवरी 2015 को किया जायेगा। आपसे निवेदन है कि आप यह तिथियाँ अभी से अंकित कर लेवें और इन तिथियों में अपनी आर्य समाज एवं अपनी संस्था का कोई कार्यक्रम न रखकर उक्त समारोह में अधिक से अधिक आर्य जनों के साथ टंकारा पधारने का कार्यक्रम बनायें। आपके आवास एवं भोजन की व्यवस्था टंकारा ट्रस्ट की ओर से होगी।

श्रावणी उपाकर्म

❒ श्री सुरेन्द्र कुमार शर्मा

वैदिक संस्कृति संसार की सर्वश्रेष्ठ ज्ञान-विज्ञान पर आधारित संस्कृति है। सृष्टि के आरम्भ में चार ऋषियों की पवित्र आत्माओं में परम पिता परमेश्वर ने वेद ज्ञान-विज्ञान सत्प्रेरणा के रूप में संसार के कल्याणार्थ दिया। तब से वेद प्रचार निरन्तर संसार में हो रहा है। भारतवर्ष के ब्रह्मज्ञानी, तपस्वी, ऋषि मुनि वर्षा ऋतु चातुर्मास में पर्वतों की कन्दराओं, वन क्षेत्र से निकलकर नगर और ग्रामीण क्षेत्र में आ जाते हैं और वहाँ मनुष्य मात्र के कल्याण के लिए वेद प्रचार करते हैं। वैदिक ज्ञान-विज्ञान से सुसज्जित मानव मूल्यों से मनुष्य समाज को सुसंस्कारित करते हैं।

प्रतिवर्ष महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित आर्य समाज श्रावणी, उपाकर्म वेद प्रचार को लक्ष्य करके श्रद्धाभाव से मनाता है। इस अवधि में वेद प्रचार, परोपकार, वैदिक साहित्य, वितरण, आर्य समाज की सम्पत्तियों भवनों की सुरक्षा, वृक्षारोपण तथा आर्य समाज के भवनों, घरों और खुले पार्कों में बृहद हवन-अग्निहोत्र कराकर संसार के उपकार के लिए उत्तम कर्म किया जाता है। इस अवधि में यज्ञोपवीत परिवर्तन की परम्परा भी चिरकाल से चली आ रही है। मनुष्य सन्तान जब माँ की कोख में होता है, उसे माँ के शरीर से खुराक मिलती है। माँ के शरीर से जोड़ने के लिए एक नाड़ी होती है, जो सिर के दाहिने कन्धे से होकर बाजू के नीचे से शरीर के ऊपर से नाभि को जोड़ती है। इसी को लक्ष्य करके भारतीय संस्कृति के विराटतम जीवन दर्शन को मानने वाले ज्ञानियों ने यज्ञोपवीत दाहिने बाजू के नीचे ऊपर से प्रचलित किया। मनुष्य सन्तानों को मातृऋण, पितृऋण एवं आचार्यऋण से उऋण होने का आह्वान करने का यह अद्‌भुत साधन है और किसी समय भारतीय संस्कृति के अनुयायियों का मूल चिन्ह अलंकार भी माना जाता था। जब कभी अनार्यों को भारतीय संस्कृति पर आक्रमण किया, वे यज्ञोपवीत को उतारकर जलाने की क्रूरता के अपराधी बने।

आज के युग में आर्य समाज और सत्य सनातन वैदिक धर्म के वैदिक विद्वान मनुष्य सन्तानों को 5 साल से 12 साल तक की आयु में यज्ञोपवीत धारण कराने का वैदिक कर्तव्य पूर्ण कराने का भरसक प्रयास करते हैं, परन्तु सामाजिक कुरीतियों ने ऐसा स्थान बना दिया है कि पुत्र के विवाह के समय माता-पिता यज्ञोपवीत के दर्शन मात्र कराते हैं और वह भी बेटे के ससुराल वालों से चाँदी या सोने का यज्ञोपवीत उपहार में लेने की कुरीति आरम्भ हो गई है। इससे यज्ञोपवीत का वास्तविक स्वरूप भी कहीं खो गया है। आर्य समाज के निष्ठावान कार्यकर्ता, अधिकारीगण और वेदप्रचारक विद्वान सामाजिक कुरीतियों को दूर करते समय इस महत्वपूर्ण सुधार बिन्दु पर ध्यान दें और दिलायें।

इस अवधि में योगिराज श्रीकृष्ण का जन्म दिवस श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के त्यौहार के रूप में मनाया जाता है तथा रक्षा बन्धन के त्यौहार पर बेटियों की सुरक्षा का व्रत भाई लेते हैं और बहिनें अपनी भाइयों की कलाइयों पर राखी के सूत्र बाँधकर उनकी दीर्घायु की मंगल कामना परम पिता परमेश्वर से करती हैं। राखी के कच्चे धागों में इतनी पवित्रता है कि यदि कोई अनजान महिला किसी अनजान आर्य की कलाई पर राखी बांध देती है तो वह जीवनभर उस महिला को अपनी बहिन का आदर-सत्कार देता है और उसकी सुख-समृद्धि सुरक्षा के लिए यथासम्भव प्रयत्नशील रहता है।

वैदिक आरम्भिक काल में जब मनुष्य सन्तानों की शिक्षा आश्रमों में होती थी तो शासक और राजा आश्रमों में जाकर रक्षा बन्धन के त्यौहार के अवसर पर यज्ञ करते थे और वेदपाठी ब्रह्मचारियों तथा आचार्यों को रक्षा बन्धन के कोमल सूत्र बाँधकर उनकी सुरक्षा और पालन का आश्वासन देते थे। आज के श्रृंगार रस प्रधान जीवन में वैदिक ज्ञान-विज्ञान के आधार पर मानव मूल्यों का प्रचार-प्रसार करके नैतिक शिक्षा देना अत्यन्त आवश्यक है, क्यों कि श्रावणी उपाकर्म इस दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्वपूर्ण पर्व है। आर्य समाजों, आर्य सभाओं के संचालक एवं अधिकारी अपने इस कर्तव्य को भी याद रखें कि इस अवसर पर संन्यासियों, ब्रह्मचारियों, वेदप्रचारकों एवं भजनोपदेशकों का यथायोग्य आदर सत्कार करें, क्यों कि वैदिक विद्वान वेद प्रचार करके मनुष्य सभ्यता का नैतिक उत्थान करने में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। उनके व्यक्तिगत और परिवारजनों की सुख-समृद्धि का दायित्व सत्य सनातन वैदिक धर्म को मानने वाले सभी आर्य समाजों और आर्य सभाओं की है। इसमें सत्य सनातन, वैदिक धर्म सभायें भी सम्मिलित हैं।

परम पिता परमेश्वर की सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, निराकर सत्ता अपनी सृष्टि के कल्याण की कामना करते हुए वेद ज्ञान और विज्ञान के आधार पर विकास, सत्य और न्याय सुनिश्चित करती है हम आर्य समाज के कार्यकर्त्ता, पदाधिकारीगण सत्यनिष्ठा से वेद प्रचार और संसार के उपकार के लिए इस अवधि में बढ़चढ़कर सर्वश्रेष्ठ वैदिक कर्म घर-घर में करें, आर्य समाज मन्दिर के भवनों में करे, खुले पार्को में करें, जिससे वातावरण रोगाणुओं से मुक्त प्राणियों के सतत जीवन के योग्य बना रहे। वैदिक संस्कृति की मालिक सुन्दरता है कि हर पर्व और त्यौहार विज्ञान पर आधारित है और जन उपयोगी सर्वहितैषी है। हम सब मिलकर यह शिवसंकल्प अपने मन में करें कि वेद ज्ञान विज्ञान के आधार पर स्थापित आर्य समाज के माध्यम से श्रावणी उपाकर्म का यह पर्व हर्षोल्लास और श्रद्धाभाव से परोपकर की दृष्टि से मनायें।

– मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा

प्रवेश प्रारम्भ

वैदिक संस्कृति का संवाहक

आर्ष कन्या गुरुकुल, दाधिया

यह गुरुकुल दिल्ली से 100 किलोमीटर एवं जयपुर से 150 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। अतः आपसे निवेदन है कि आप गुरुकुल में अधिक से अधिक संख्या में कन्याओं को प्रवेश दिलाकर आर्ष सिद्धांतों के प्रचार-प्रसार में योगदान दें।

गुरुकुल की विशेषताएं- ❏ कक्षा 6 से 9 तक तथा 11वीं व शास्त्री प्रथम वर्ष में प्रवेश प्रारम्भ। ❏ महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक से मान्यता प्राप्त।

सम्पर्क करें- आचार्या प्रेम लता, फोन-01495-270503, मो. 09416747308, **संयोजक- श्रीमती अरूणा सतीजा,** दूरभाष: 0141-2623732, मो. 09460183872

योगेश्वर कृष्ण का दिव्य स्वरूप

❒ जे.पी. श्रीवास्तव

योगेश्वर कृष्ण का वास्तविक जीवन क्या था तथा समाज में उसकी वस्तु स्थिति क्या है, जानने के लिए हमको वेद व्यास रचित महाभारत की शरण में जाना होगा। यद्यपि हमारे सभी धार्मिक ग्रन्थों में मिलावट की जा चुकी है, परन्तु महाभारत में ऐसा कम हो पाया है। वेद व्यास जी स्वयं कृष्ण के समकालीन थे तथा दोनों में अत्यन्त प्रेम भाव एवं आदर सत्कार की भावना निहित थी।

महाभारत के अतिरिक्त कृष्ण के बाल्यकाल को अनेक पुराणों में विशेषकर भागवत, विष्णु पुराण एवं ब्रह्म पुराण में भी वर्णित किया गया है। अधिकांश कथायें जो इन ग्रन्थों में वर्णित हैं, वे कृष्ण को परमात्मा का अवतार सिद्ध करने हेतु लिखी गई हैं। उदाहरण के लिए श्री कृष्ण का जन्म होते ही, कारागार के द्वार स्वयं खुल जाना, द्वारपालों का सो जाना, नन्द के द्वारा एक नव जात कन्या को लाकर कृष्ण के स्थान पर लिटा देना एवं कृष्ण को लेकर नन्द ग्राम प्रस्थान करना, वर्षा ऋतु में यमुना का जल स्तर बढ़कर कृष्ण के पैरों को छुकर वापस कम हो जाना आदि आदि घटनायें यही सिद्ध करती हैं। वास्तव में कृष्ण एक विलक्षण महापुरुष थे जिनका पदार्पण धर्म की रक्षा हेतु हुआ था, जिनको अपने पूर्व जन्मों का ज्ञान था। इस बात को वे अर्जुन से कहते हैं कि ''हे अर्जुन मेरे और तुम्हारे अनेकों जन्म बीत चुके हैं। उन सब को मैं जानता हूं, पर तू नहीं जानता।'' (गीता 4/5)। गीता के अन्त में कृष्ण, अर्जुन को उपदेश करते हैं-

''ईश्वर सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन्तर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायाया॥ (गीता 18.61)

हे अर्जुन! ईश्वर प्राणिमात्र के हृदय में, प्राणिमात्र को अपनी रचना शक्ति द्वारा यन्त्रारूढ़ करके घुमाता हुआ स्थित है। अपनी सम्पूर्ण भक्ति भावना से तू उसकी ही शरण में जा। (गीता 18.62)

गीता के अध्याय 7 का श्लोक 24 भी अवतारवाद का खंडन करता है।

''अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः।
परं भावमजानन्तो मामाव्ययमनुत्तमम्। (गीता 7.24)

अर्थः बुद्धिहीन लोग इस जड़ प्रकृति अथवा अवतारवादादि रूप में मुझे परमात्मा, जो अव्यक्त (न दिखायी देने वाला है) है, व्यक्तिरूप (मनुष्य रूप में) आया हुआ मानते हैं।

उपरोक्त श्लोकों से प्रमाणित है कि भगवान कृष्ण ने स्वयं ही अपने को मनुष्य रूप में ही माना है तथा अवतारवाद का खंडन किया है।

भागवत पुराण एवं महाभारत में भी ऐसे अनेकों प्रमाण मिलते हैं जो कि सिद्ध करते हैं कि श्री कृष्ण जी स्वयं नित्य ईश्वरोपसना करते थे।

'नारद जी ने देखा कि श्री कृष्ण यज्ञकुण्ड में हवन कर रहे हैं। पंचयज्ञ से ईश्वर की आराधना कर रहे हैं एवं मौन होकर गायत्री मन्त्र का जप कर रहे हैं। कहीं एकांत में बैठकर प्रकृति से भी उच्च परब्रह्म परमेश्वर का ध्यान कर रहे हैं।'' (भागवत, स्कन्ध 10, अध्याय 69 श्लोक, 24, 25, एवं 30)

श्री कृष्ण जो सूर्योदय से पूर्व उठकर नित्य कर्मो से निवृत्त होकर परमात्मा के ध्यान में लीन हो गये फिर सूर्य की उपासना की। देवताओं ऋषियों, पितरों (पिता तुल्य) वृद्धा, ब्राह्मणों, आचार्यों, आदि का सत्कार करके गोदान किया।'' (भगवान अध्याय 70 श्लोक)

''हस्तिनापुर, दूत के रूप में जाते हुये, संध्या काल होते ही रथ से उतरकर, शौचादि कर्म से निवृत्त होकर परमात्मा की उपासना हेतु बैठ गये''। (महाभारत, उद्योगपर्व अध्याय 84.21)

'' दूसरे दिन भी प्रातः उठकर, स्नान, जप एवं यज्ञ से निवृत होकर सूर्य की उपासना की एवं वस्त्र धारण करके ध्यान प्रस्थान किया।''। (महाभारत, उद्योगपर्व, अध्याय 94 श्लोक 6)

ऐसे अनेकों उदाहरण पुराणों एवं दूसरे धार्मिक ग्रन्थों से प्रस्तुत किये जा सकते हैं।

श्रीकृष्ण के जन्म के पूर्व देश की दशा- वेद व्यास कृत महाभारत से ही विदित होता है कि कृष्ण के जन्म के वर्षो पूर्व वैदिक धर्म के ह्रास प्रारम्भ हो चुका था। अधर्म बढ़ रहा था। ऐसे धर्म संकटों के अवसरों से पार पाने के लिए तथा साधु प्रकृति के मनुष्यों की रक्षा के लिये, परमात्मा अपनी न्याय व्यवस्था के अंतर्गत किसी महापुरुष का अवतरण उस व्यक्ति के पूर्व जन्म के संस्कारों एवं कर्मो के आधार पर करता है। ऐसे अवतार, कृष्ण के पूर्व युगों, मे हो चुके थे एवं बाद में भी हुये। अवतार का अर्थ स्वयं परमात्मा का मानव रूप में जन्म लेना नहीं है। इसी अनुचित विचारधारा ने ''अवतारवाद'' को प्रोत्साहित किया। वेद ने इसका पूर्ण रूप से खंडन किया है।

कृष्ण के वंशज, महाराज युद्ध की सन्तान थे। अतः कृष्ण भी यादव कहलाये। उनकी माता देवकी तथा पिता वसुदेव थे। तत्कालीन भारत में अनेकों छोटे-छोटे राज्य थे, जिनमें अधिकांश राजा अन्यायी, अत्याचारी एवं प्रजा को पीड़ा पहुँचाने वाले थे। मगध देश का राजा जरासंघ अत्यन्त अहंकारी एवं दुष्ट प्रकृति का था। उसकी एक पुत्री का विवाह मथुरा के राजा कंस से हुआ था जो कि स्वयं भी अत्याचारी, अधार्मिक एवं प्रजा को पीड़ा पहुंचाने वाला था। उसने अपने पिता महाराजा उग्रसेन को बंदी बनाकर स्वयं को राजा घोषित कर दिया था। कंस अंध विश्वासी भी था। किसी ने उसको समझा दिया था कि उसकी बहन देवकी की ही कोई संतान उसकी हत्या का कारण बनेगी। इस बात को आधार बनाकर उसने अपनी बहन देवकी व बहनोई वसुदेव को कारागार में बन्द कर दिया। बहन-बहनोई के जब भी कोई संतान उत्पन्न होती, उसको वह तुरन्त स्वयं मरवा डालता। कृष्ण के जन्म काल के पूर्व वसुदेव ने किसी प्रकार अपने मित्र नन्द जो कि गोकुल में रहते थे, इस बात के लिये राजी किया कि वे बच्चे के जन्म के बाद शीघ्र बच्चे को अपने घर पालन पोषण के लिए ले जायें। नन्द जी ने एक नवजात कन्या का प्रबन्ध भी किया तथा कारागार में जाकर कृष्ण के स्थान पर बच्ची को लिटाकर कृष्णा को लेकर वापस अपने निवास पर आ गये। इस घटना को कोई भी जान न सका।

ऐसा प्रतीत होता है कि कंस कई अत्याचारों का विरोध कारागार के कर्मचारी एवं जनता भी करती थी। तभी नन्द को सफलता प्राप्त हुई। कंस ने कन्या के उत्पन्न होने के समाचार ज्ञात होने पर उस कन्या का वध कर दिया। इस प्रकार कृष्ण का बचपन नन्द-यशोदा के घर पर हुआ जो कि गो-पालक थे।

कृष्ण ने बाल्यकाल से ही लोकहितकारी कार्यो को करने में रूचि दिखलाई। उनमें वीरता, साहस, निर्भीकता के जो गुण विकसित हुये, वे आगे चलकर कृष्ण को महायोगी अथवा महामानव की श्रेणी तक पहुंचा सके। उन्होंने अपने स्वास्थ्य का भी पूरा ध्यान रखा। घर में दूध,

दही, माखन आदि की कोई कमी न थी। अतः उनका शरीर, पूर्ण-रूपेण हुष्ट-पुष्ट हो गया। कुश्ती लड़ने में एवं अन्य व्यायामों के कारण अनेक राक्षसों विशेषकर शकटासुर, वकासुर, शंखचूड़, अरिष्ट एवं केशी का बड़ी सरलता से वध कर दिया। कृष्ण के इन कृत्यों के कारण कंस भी घबरा उठा तथा उसने कृष्ण को पकड़ कर बन्दी गृह में डालने का आदेश दियां भला कृष्ण अत्याचारी शासक के वश में कहाँ आने वाले थे। उन्होंने अवसर पाकर कंस को उसके बालों से पकड़कर पृथिवी पर पटककर मार डाला। कंस, कृष्ण के पौरूष के आगे कुछ न कर सका। कृष्ण ने मथुरा का राज्य स्वयं न लेकर कंस के पिता, महाराजा उग्रसेन जो उनके वास्तव में नाना जी भी थे को दे दिया। अभी तक कृष्ण को विधिवत शस्त्रों और शास्त्रों का कोई भी ज्ञान नहीं था। जबकि वे पूर्ण युवक हो चुके थे। अतः उनको उज्जैन नगरी में सांदीपन ऋषि नामक विद्वान के पास भेजा गया, जहाँ उन्होंने वेदों, शास्त्रों, आदि के साथ-साथ धनुर्वेद का भी अध्ययन किया। न्याय, मीमांसा आदि दर्शनों के साथ-साथ राजनीति विद्या का ज्ञान प्राप्त किया। इस प्रकार वे आध्यात्मिक एवं भौतिक (परा एवं अपरा) विद्याओं में पारंगत हो गये। इसका ही परिणाम था कि वे गीता में कर्मयोग के माध्यम से अर्जुन को युद्ध करने के लिए प्रेरित कर सके।

कृष्ण एक पत्नीव्रताः कृष्ण का विवाह रूकमणि के साथ वैदिक विधि से हुआ था। उनके विषय में पुराणों की धारणा की उनके सोलह हजार रानियाँ थी, भ्रामक तथ्य है। रूकमणि के पिता भीष्मक भी कृष्ण को अपना जामाता बनाना चाहते थे एवं रूकमणि भी कृष्ण को ही वरण करने की इच्छा रखती थी। विवाह पश्चात दोनों ने बारह वर्षो तक हिमालय में किसी स्थान पर तपस्या की। पश्चात् उनके प्रद्युम्न नामक एक पुत्र पैदा हुआ जो कि अपने पिता के ही अनुरूप, गुणों में अग्रणी था।

कृष्ण एवं राधा- राधा का नाम महाभारत, भागवत तथा विष्णुपुराणों में कहीं नहीं आता। ब्रह्मवैवर्तपुराण में ही राधा-कृष्ण के अलौकिक प्रेमभाव का वर्णन मिलता है। कृष्ण के इस प्रेम को संदिग्ध ही कहा जा सकता है।

कृष्ण का उपनाम माखनचोरः- कृष्ण को इस नाम से याद करने वाले विचार करें कि वे कहाँ तक उनके चरित्र को उज्ज्वल बना रहे हैं। कृष्ण जिसके घर में दूध की नदियां बहती हों, क्या वास्तव में चोरी करेगा। यह घटना अवोधावस्था की ही हो सकती है, जब कि कोई भी बालक इस प्रकार का कार्य कर सकता है। हम याद रखें कि ऐसे नामों से विदेशी लोगों पर कितना बुरा प्रभाव पड़ता होगा।

कृष्ण का उपनाम रण छोण दासः- कंस की मृत्यु के पश्चात् मगध के राजा जरासंघ ने कृष्ण से बदला लेने के लिए मथुरा पर अनेकों बार आक्रमण किये। उस समय तक कृष्ण युद्ध कला में न पारंगत हो पाये थे न उनके पास अपना कोई राज्य व सेना थी। अतः उन्होंने सभी यादवों के साथ मथुरा को त्याग कर द्वारिका नगरी जो कि समुद्र के किनारे बसी थी, प्रस्थान करने का विचार किया था प्रस्थान कर गये। युद्ध से मुँह मोड़ने के कारण कृष्ण भक्तों ने उनका नाम रण छोड़ दास रख दिया जो कि ऐसे परमवीर के लिए उपयुक्त नहीं था।

उपरोक्त उदाहरण कृष्ण के चरित्र को गिराने वाले हैं तथा वास्तविकता से परे हैं। सत्यता तो यह है कि कृष्ण के उत्तम चरित्र के कारण ही कृष्ण के समकालीन उनके प्रति अपार श्रद्धा व भक्ति रखते थे। व्यास जैसे महर्षि भीष्म पितामह जैसे शूर-वीर एवं आयु में कृष्ण से काफी बड़े विदुर जैसे नीतिज्ञ, अर्जुन, भीम आदि सभी भाई एवं धृतराष्ट्र तक कृष्ण के प्रति आदरभाव रखते थे। युधिष्ठिर ने जब राजसूय-यज्ञ किया तब सबसे प्रथम कृष्ण को ही पूजा गया। जिसका अनुमोदन भीष्म पितामह ने तक किया। श्रीकृष्ण जी ने अपने जीवनकाल में जो अपने चरित्र का दिव्य स्वरूप समाज के सामने प्रस्तुत किया, उसी के फल स्वरूप समाज ने उनको ईश्वर या परमात्मा की श्रेणी में ला बिठलाया, तो इसमें आश्चर्य की क्या बात हैं। कृष्ण एक युग प्रवर्तक थे जिनकी याद हम युगों युगों तक करते रहेंगे।

महर्षि दयानन्द सरस्वती के शब्दों में ''श्रीकृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अति उत्तम है। उनका गुण, कर्म स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के संदेश है। जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्री कृष्ण जी ने जन्म से मरण पर्यन्त बुरा, काम कुछ भी किया हो, ऐसा नहीं लिखा।'' (सत्यार्थप्रकाश)।

- 11, गंगोत्री नगर, गोपाल पुरा वाई पास, जयपुर-18

टंकारा ट्रस्ट इंटरनेट पर
श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा
www.tankara.com पर उपलब्ध है

गौ-दान : महा-दान

श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा द्वारा संचालित अन्तर्राष्ट्रीय उपदेशक महाविद्यालय में ब्रह्मचारियों की दिन- प्रतिदिन बढ़ती संख्या के कारण टंकारा स्थित 'गौशाला' से प्राप्त दूध ब्रह्मचारियों हेतु पर्याप्त नहीं हो पा रहा है। इस कारण ट्रस्ट ने यह निश्चय किया कि तुरन्त नयी गायों को खरीद लिया जाये ताकि ब्रह्मचारियों को पर्याप्त मात्रा में दूध उपलब्ध कराया जा सके।

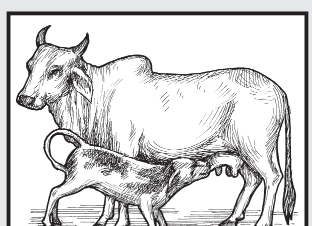

टंकारा स्थित गौशाला हेतु भारत के असंख्य आर्य परिवारों एवं आर्य संस्थाओं की ओर से 20000/- रुपये प्रति गाय हेतु दानराशि प्राप्त हो रही है। गुरुकुल में ब्रह्मचारियों की बढ़ती संख्या को देखते हुए एवं कच्छ में गरम वातावरण होने के कारण गौओं का कम दूध देने के कारण अभी भी गायों की आवश्यकता है। दानी महानुभावों से निवेदन है कि इस पुण्य कार्य में अपनी श्रद्धानुसार आहुति डाल कर पुण्यार्जन करें। आप इस पुण्य कार्य के लिए राशि **श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा,** के नाम चैक/ ड्राफ्ट द्वारा केवल खाते में आर्य समाज (अनारकली), मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-110001 पर भिजवाकर कृतार्थ करें।

टंकारा ट्रस्ट को दी जाने वाली राशि आयकर से मुक्त है।

सत्यानन्द मुंजाल (मैनेजिंग ट्रस्टी/प्रधान) **शिवराजवती आर्या** (उप-प्रधाना) **रामनाथ सहगल** (मन्त्री)

विरोधाभासों के बीच कैसे जिएँ

❑ डॉ. सूर्यदेव शास्त्री

यदि जीवन का मूल्यांकन करें तो हम पाते हैं कि जीवन सुखों और दु:खों से भरा हुआ बड़ा पिटारा है। जितनी बड़ी पृथ्वी है इससे भी बढ़कर जो सूर्य है उसके सामने आ जाने पर यह पृथ्वी प्रकाश से युक्त अर्थात् सुखमय दिखाई देती है और इसके विपरीत अंधकार अर्थात् दु:खो से भरा जीवन दिखाई देता है। योग दर्शनकार से उनके शिष्यों ने पूछा–मुनिवर! जीवन में जो दु:ख आते हैं उनका कारण क्या है? पतञ्जलि मुनि ने सोच समझकर उत्तर दिया–

''अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष अभिनिवेश इति पञ्च क्लेशा:''

अर्थात् दु:खो का सर्वप्रथम कारण है–अविद्या, इसी शैली पर यदि आपसे कोई पूछे–कि बताओ सुख का कारण क्या है तो आप सहज ही उत्तर देंगे विद्या। यह उत्तर एकदम सही माना जाना चाहिए। यदि दु:ख का कारण अविद्या है तो सुख का कारण विद्या है। यदि दु:ख का कारण अहंकार है तो सुख का कारण है विनम्रता। यदि दु:ख का कारण ऐश्वर्य है तो सुख का कारण है त्याग। यदि दु:ख का कारण पराक्रम है तो सुख का कारण है वाणी का संयम। यदि तप करना दु:ख का कारण है तो सुख का कारण है अक्रोध अर्थात् क्रोध न करना। यदि बल दु:ख का कारण है तो सुख का कारण है क्षमा करना। यदि धन है दु:ख का कारण तो सुख का कारण है दान। यदि धर्म दु:ख का कारण है तो सुख का कारण है छल रहित जीवन।

यहाँ पाठकों को मेरी बातें कुछ अटपटी लगेंगी क्योंकि जीवन में जिन गुणों को हम सुख का कारण समझते हैं मैं उन गुणों को दु:ख का कारण मान रहा हूँ। ये गुण हैं- अविद्या और विद्या, ऐश्वर्य और त्याग, पराक्रम और वाणी का संयम, तप और क्रोध न करना, धन और दान, धर्म और छलकपट रहित जीवन।

उक्त लेखन के आधार पर दु:ख का कारण है अविद्या, ऐश्वर्य, पराक्रम, तप, बल, धन और धर्म। उन्नति की राह में कुछ मूलभूत भूल–चूक हो गई, जैसे–जैसे इस ऐश्वर्य की दिशा में आगे बढ़े तो पता चला कि जीवन से त्याग अदृश्य हो गया। जब जीवन में पराक्रम दिखाई देने लगा तो वाणी का संयम विदा होता हुआ दिखाई पड़ा। हमने व्रत आदि का तप प्रारम्भ किया तो पता चला कि जीवन में दबे पाँव क्रोध का समावेश हो गया, अब हमें ऐसा अनुभव होने लगा कि हमसे बढ़कर कोई तपस्वी नहीं है इसी प्रकार जीवन में बल बढ़ता हुआ देखा तो सहनशक्ति का दायरा छोटा होता चला गया है। धन बढ़ाने की प्रवृत्ति जागी तो दान छूट गया और धर्म में आस्था शुरु हुई तो जीवन छल–कपट से परिपूर्ण हो गया। उक्त सभी गुण अच्छे गुणों में गिने जाते हैं लेकिन इन ''गुणों के होने से जो अभिमान उत्पन्न होता है वह इन उच्च श्रेणी के गुणों को नीच श्रेणी में लाकर खड़ा कर देता है''। ये अभिमान हमारी परछाई की तरह होता है। यह अभिमान हमारी उन्नति के साथ–साथ बढ़ता रहता है। हम बढ़ने की दिशा में उन्नति कर रहे हैं हम ऐश्वर्यशाली अर्थात् सभी साधनों से सम्पन्न होते जा रहे हैं हमारा पराक्रम बढ़ता जा रहा है हमने अपनी सफलता को तप का दर्जा दे दिया है हमारा बल बढ़ता हुआ प्रतीत होता है। इसी से हम धनी अनुभव करते हैं और कभी–कभी हमारे मन में ध र्म कार्यो में दान करने की इच्छा भी जाग्रत होती है किन्तु आगे बढ़ने की होड़ में हम यह भूल जाते हैं कि अभिमान उस धूल की तरह है जो हमारी आँखों में पड़ी हुई है यह धूल जब तक आँखों में पड़ी रहती है तब तक यह सारा जहाँ हमें साफ–साफ दिखाई नहीं देता। हमें बस वही दिखाई देता है जिसे हम देखना चाहते हैं।

पूरे आकाश को देखना चाहते हो तो आंखों से धूल का साफ होना बेहद आवश्यक है इसी प्रकार सृष्टि में ईश्वर को समझना चाहते हो तो जीवन का अभिमान शून्य होना आवश्यक है, अभिमान के रहते इस सृष्टि के रहस्य को अथवा ईश्वर के सत्य स्वरूप को पहचान पाना मुश्किल ही नहीं असंभव हैं। मेरा उद्देश्य आपके दिल को दु:खाना नहीं है बल्कि उन्नति की राह में आने वाली अड़चनों से आगाह करना है इस प्रसंग में महाभारतकार महर्षि वेदव्यास के जीवन का एक प्रसंग आपके समक्ष रखता हूँ–

एक बार की बात है जब महर्षि वेदव्यास बूढ़े हो चले थे अब उन्हें भी मृत्यु का भय सता रहा था वे अपनी सम्पत्ति का बंटवारा करना चाहते थे लेकिन उससे भी अधिक चिन्ता उन्हें इस बात की थी कि वे अपना अमूल्य ज्ञान किसको दें? कोई भी तो ऐसा व्यक्ति, परिवार में समाज में अथवा राष्ट्र में दिखाई नहीं दे रहा था कि जिसे वे अपने ज्ञान को सौंप सके और उस ज्ञान को आगे बढ़ाने की बात कह सकें–अब महर्षि वेदव्यास और भी अधिक चिन्तित रहने लगे, जब उन्हें यह भान हो गया कि पूरे देश में उनके ज्ञान को चाहने वाला कोई भी नहीं, धन–धान्य चाहने वालों की तो कोई कमी नहीं है धन के सम्बन्ध में तो अपने और पराये सभी अपने होना चाहते हैं कि वेदव्यास अपना धन हमें दे जाएँ, अपनी जमीन हमें दे जाएं, अपनी आर.डी. और एफ. डी. हमें सौंप जाएँ, अपनी आर.डी. और एफ.डी. हमें सौंप जाएँ, अपनी सारी सम्पत्ति हमारे नाम कर जायें। लेकिन एक भी व्यक्ति ऐसा दिखाई नहीं पड़ा जिसे वे अपना ज्ञान दे सकें। एक ओर बढ़ती उम्र और दूसरी तरफ उचित पात्र का न मिलना। अब वेद व्यास लोगों को अपने पास बैठने को बुलाते और उन्हें अपना ज्ञान परक उपदेश सुनाने लगते–लोग थे कि कुछ देर सुनते फिर उनके उपदेश को पकाऊ समझकर उठकर चल देते–कोई भी उनका उपदेश सुनने के तैयार न होता अब वेद व्यास जोर–जोर से चिल्लाने लगे कि मेरी बात सुनो, मेरे ज्ञान को समझो, गली–गली में लोगों से प्रार्थना करने लगे लेकिन लोग थे कि अपने काम काज में लगे रहते और वेदव्यास के हाथों उदासी के अलावा कुछ भी नहीं मिलता। कुछ दिन बीते वेदव्यास जी की चिन्ता और बढ़ने लगी और अब वे पागल की तरह चिल्लाने लगे–रोने लगे, जोर–जोर से रोने लगे कि कोई तो मेरी ज्ञानपरक बात सुनो। धीरे–धीरे यह बात दूसरे गांव में भी पहुंच गई कि चारों वेदों के ज्ञाता वेदव्यास लोगों से कुछ करना चाहते हैं, लोग उनकी बात सुनने को तैयार नहीं हैं, शायद इसका प्रमुख कारण है उनकी वृद्धावस्था। आज भी समाज में देखा जाता है कि वृद्धावस्था होने पर उनकी ज्ञानपरम बातें उन्हीं के साथ चली जाती हैं, अर्थात् उनकी मूल्यवान बातों को भी लोग ध्यान से नहीं सुनते। फिर भी कुछ लोगों ने सोचा कि महर्षि वेदव्यास को साधारण व्यक्ति मान लेना यह हमारी भूल होगी इसलिए हम सभी को चलकर वेदव्यास के जीवन भर के सार रूप ज्ञान को सुनना चाहिए और एक दल तैयार हुआ और ठीक समय पर वेदव्यास के सामने उपस्थित हुआ। वेदव्यास को अभी तक यह ज्ञान नहीं था कि ये सभी मेरा ज्ञान पाने की इच्छा से मेरे पास आये हैं। महर्षि उन्हें देखकर बोले–''ऊर्ध्वबाहु विरोम्येष न च कश्चित् श्रृणोति माम्''। अर्थात् हे मनुष्यों ! मैं अपनी दोनों भुजाओं को ऊपर करके चिल्ला रहा हूँ, चीख रहा हूँ, ''मेरी बात सुनो'' कह रहा हूँ, लेकिन लोग हैं कि मेरीब बात सुनने को तैयार नहीं हैं। ऐसा सुन कर लोगों ने कहा–महर्षि! आप दु:खी न हों, हम सभी आपकी ज्ञानपरक बातें सुनने के लिए एकत्रित हुए हैं। आप अपनी ज्ञानपरक बातें हमसे कहें। ऐसा सुनकर वेदव्यास ने लम्बी साँस ली और भक्तों को बैठ जाने की प्रार्थना की, लोग बैठ

गये-सभा शान्त हो गई, लोग सुनने के लिए आतुर थे। महर्षि वेदव्यास ने अपने सम्बोधन देने के उपरान्त कहा-हे मनुष्यो! आज यह शुभ दिन आया है जब तुम सभी मेरी बातें सुनने के लिए आये हो। मैं आज के दिन आप लोगों को अपने जीवन के रहस्यात्मक ज्ञान को रखना चाहता हूँ-मैं अभी तुम्हें वेदादि शास्त्रों के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहूँगा, मैं अब तुम्हें दर्शन (शास्त्रों) के सम्बन्ध में कुद नहीं कहूँगा, आज मैं आप लोगों को उपनिषद् अथवा गीता सरीखे धर्म ग्रन्थ के सम्बन्ध में भी कुछ नहीं कहूँगा, मैं तो तुम्हें केवल इतना कहूँगा- हे भद्रपुरुषों! हे आस्तिक लोगों लोगों! यह मनुष्य का शरीर बहुमूल्य है यदि इसे व्यर्थ में बिता दिया तो इससे बढ़कर और कोई हानि नहीं हो सकती।

सचमुच मानवजीवन अनमोल है, बहुत से लोग तो इस जीवन के मूल्य को नहीं समझते इसलिए अधिकांश लोग तो बस जीवन में अपना उद्देश्य समझते हैं कि खाओ, पीओ और मौज करो।

समाज में सभी तरह के लोग उपलब्ध होते हैं हमें जैसे लोगों की तलाश रहती है वैसे ही लोग हमें उपलब्ध हो जाते हैं, समाज में ईश्वर की सत्ता स्वीकार करने वाले लोग भी उपलब्ध है और निन्दा करने वाले भी। जीवात्मा को स्वीकार करने वाले भी उपलब्ध हैं और नकारने वाले भी, इसी प्रकार प्रकृति को स्वीकार करने वाले लोग भी उपलब्ध हैं, ईश्वर जीव और प्रकृति तीनों तत्वों को नित्य स्वीकार करने वाले लोग भी उपलब्ध हैं अर्थात् त्रैतवाद को स्वीकार करने वाले भी समाज में बराबर दिखाई देते हैं-इसी प्रकार समाज में समय-समय पर अनेक मत शुरु हुए। भिन्न-भिन्न आचार्यो ने लोगों के बीच अपनी मान्यता का प्रचार किया और उन आचार्यो को अनुयायी भी मिल गये और समाज में एक-एक करके नये मतों की स्थापना हो गई। कुछ आचार्यो के मत तो इतने अल्पकालिक होते हैं, कि वे उनके जीवन काल में ही विदा भी हो जाते हैं। मेरा उद्देश्य किसी आचार्य का मूल्यांकन करना नहीं है, मैं तो केवल महर्षि वेदव्यास के उस कथन को आपके बीच में स्थापित करना चाहता हूँ, जिसे उन्होंने जीवन के सार रूप में प्रस्तुत किया। मनुष्य जीवन अनमोल है, यह मनुष्य जीवन दूसरे जीवों की अपेक्षा श्रेष्ठ है। शास्त्रों में प्राणियों की संख्या को लेकर 84 लाख योनियाँ सुनने में आती हैं, लेकिन मनुष्य योनि इन तमाम योनियों में सर्वश्रेष्ठ है। महर्षि वेदव्यास ने महाभारत के आदिपर्व में लिखा है-

धर्मे अर्थे च कामे च मोक्षे च पुरुषर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्॥

अर्थात् हे अर्जुन! धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के सम्बन्ध में जो बात इस मनुष्य जीवन में है वह बात दूसरी किसी भी योनि में नहीं है अर्थात् मनुष्य योनि ही सर्वश्रेष्ठ है ऐसी सर्वश्रेष्ठ योनि को यदि हमने यूँ ही व्यर्थ में बिता दिया तो इससे बढ़कर और क्या हानि होगी? जीवन की सबसे बड़ी हानि यही है कि हम जीवन के मूल्य को नहीं समझ पाते, इस जीवन के उद्देश्य निधारित नहीं कर पाते, इस जीवन की सीमाओं को नहीं जान पाते, इस जीवन में कर्तव्य और अकर्तव्य का बोध नहीं जुटा पाते, यह कहना तो आसान होता है कि प्रत्येक व्यक्ति का आत्मा सत्य को जानने हारा है किन्तु सत्य और असत्य का बोध होने पर भी हम उसे स्वीकार अथवा अस्वीकार नहीं कर पाते, हमारी बुद्धि की अनुकूलता या प्रतिकूलता और इसी प्रकार हमारे शरीर की अनुकूलता या प्रतिकूलता भी इसे स्वीकार करने या न करने का कारण बनती है। कभी-कभी तो हमारा कर्तव्य सामाजिक नियमों के कारण भी अनुकूल या प्रतिकूल हो जाता है। इस प्रसंग में मुझे महाभारत की एक घटना याद आती है-

महाभारत का युद्ध होना लगभग तय हो चुका था। नीति विद्या में निपुण महाराज श्रीकृष्ण युद्ध से बचना चाहते थे, इसलिए तरह-तरह से उपाय ढूँढ रहे थे। इसी प्रसंग में वे शांतिदूत बनकर दुर्योधन से मिलने गये लेकिन उन्हें सफलता नहीं मिली। इस नीति में असफल होने पर इन्होंने एक उपाय और सोचा कि यदि मैं कर्ण के पास जाकर उसे ये समझाऊँ कि तुम या तो युद्ध में भाग मत लो, और यदि युद्ध में भाग लेना ही हो तो तुम अपना युद्ध धर्म के पक्ष में लड़ो,- अर्थात् पाण्डवों के पक्ष में होकर लड़ो-यूँ भी तो तुम्हें यह ज्ञान होना चाहिए कि तुम ज्येष्ठ कुन्ती पुत्र हो इस कारण भी तुम्हें पाण्डवों की ओर से युद्ध करना चाहिए। महाराज कृष्ण की यह सब बातें सुनकर कर्ण ने कहा-हे कृष्ण।

सूतो वा सूत पुत्रो वा ये वा को वा भवाम्यहम्।
दैवायत्तं कुले जन्म मदायत्तं तु पौरुषम्॥

अर्थात् मैं सूत हूँ या सूत पुत्र, इससे मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता, क्योंकि जन्म प्रदान करना तो ईश्वर के आधीन है और पुरुषार्थ करना मेरे हाथों में है। इसलिए हे कृष्ण! मेरे लिए इस बात का कोई महत्व नहीं है कि मैं किसका भाई हूँ, और किसका पुत्र, मेरे लिए तो सबसे बढ़कर यह बात है कि दुर्योधन मेरा मित्र है उसने हमेशा मुझसे एक मित्र की भाँति बर्ताव किया है और इस व्यवहार के कारण मैं कहना चाहता हूँ-

जानानि धर्मं न च मे प्रवृत्तिः, जानाम्यधर्मं न च मे निवृत्तिः।

कर्ण कहते हैं कि मैं धर्म के मार्ग को भी जानता हूँ लेकिन मैं उसका अनुसरण नहीं कर सकता और मैं अधर्म के मार्ग को भी जानता हूं लेकिन इसे मैं छोड़ नहीं सकता। इसलिए हे कृष्ण! यद्यपि मैं आपका सम्मान करता हूँ तथा आपके बताये हुए मार्ग का अनुसरण नहीं कर सकता।

हम सभी के जीवन में भी ऐसे क्षण आते हैं कि हमारा मन, हमारी बुद्धि और हमारी आत्मा से सत्य का बोध होता है, लेकिन हम उन आदर्शो पर चलने के लिए तैयार नहीं हो पाते यह कैसी विचित्र विडम्बना है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने लाभ-हानि का निर्धारण करने में समर्थ है लेकिन उस पर आचरण करना कठिन हो जाता है हम पायेंगे कि जीवन ऐसी दुविधाओं से भरा पड़ा है, कर्तव्य और अकर्तव्य का निर्णय कर पाना तो योगिजनों के लिए भी किसी चुनौती से कम नहीं है-महाराज कृष्ण ने लिखा है कि-**किं कर्म किमकर्मेति कवयोऽत्र मोहिताः।** अर्थात् कर्तव्य और अकर्तव्य के बीच में ऋषि मुनि लोग भी सही निर्णय नहीं ले पाते। मैं इस प्रसंग में यह भी कहना चाहता हूं कि हमारा जीवन भले ही दोराहे और चौराहे पर खड़ा हो, भले ही व्यक्ति कर्तव्य और अकर्तव्य में निर्णय न कर पाता हों, भले ही लाभ-हानि, जय-पराजय अथवा सुख-दु:ख का निर्णय कर पाना कठिन समझता हो लेकिन सुधी जन अपनी सूझबूझ से विपरीत परिस्थितियों में भी अपना मार्ग प्रशस्त कर लेते हैं-

मैं यहाँ एक घटना प्रस्तुत करना चाहता हूँ यह घटना शिवपुराण पर आधारित है। शिवपुराण में प्रधानता से भगवान् शिव की महिमा का वर्णन है। मैं शिवपरिवार के सम्बन्ध में एक सर्वसाधारण जानकारी का वर्णन करना आवश्यक समझता हूँ-भगवान शिव की महत्ता का जितना वर्णन किया जा सके उतना कम है आपकी जितनी जानकारियाँ भगवान् शिव के सम्बन्ध में हैं शायद मैं एक जानकारी उसमें और जोड़ना चाहता हूँ-भगवान् शिव संस्कृत व्याकरण के आदि पुरुष रहे हैं आज तक विश्व की सभी भाषाओं में व्याकरण के प्रसंग में यह जानना आवश्यक है कि संस्कृत भाषा का व्याकरण सबसे पुराना एवं बढ़कर है इस भाषा का व्याकरण सबसे बड़ा एवं सम्पूर्ण है। इसमें किसी भी प्रकार की कोई त्रुटि नहीं देखी जाती, कहते हैं इस व्याकरण को अभी तक चौदह बार

(शेष पृष्ठ 18 पर)

अच्छी शिक्षा से बालक अच्छे विचार के होते हैं

❒ श्री हरिशचन्द्र वर्मा 'वैदिक'

मातृमान् पितृमान आचार्यवान पुरुषोवेदः॥ यह शतपथ ब्राह्मण का वचन है। वस्तुतः जब तीन उत्तम शिक्षक अर्थात् एक माता, दूसरा पिता और तीसरा आचार्य होवे तभी मनुष्य ज्ञानवान होता है। वह कुल धन्य वह सन्तान बड़ा भाग्यवान, जिनके माता और पिता धार्मिक विद्वान हों। जितना माता से सन्तानों को उपदेश और उपकार पहुँचता है उतना किसी से नहीं।

ऋषिदयानन्द स.प्र. द्वितीय समु. में लिखते है कि-बालक को माता-पिता सदा उत्तम शिक्षा करें जिससे सन्तान सभ्य हों और किसी अंग से कुचेष्टा न करने पाएं। जब वह कुछ-कुछ बोलने और समझने लगे तब सुन्दर वाणी और बड़े छोटे, मान्य, पिता-माता, राजा, विद्वान आदि से भाषण सुनने और उनके पास बैठने आदि की भी शिखा करें, जिससे उनका कहीं अयोग्य व्यवहार न होके सर्वत्र प्रतिष्ठा हुआ करे।''

यह सत्य है माता-पिता और आचार्य यही तीन अपने बालक-बालिका को उत्तम संस्कार दे सकते हैं। इन्हीं तीन पूज्य लोगों से शिक्षा, विद्या और बुद्धि जो बालक-बालिका को प्राप्त होती है, उनसे वे युवावस्था में भी कभी अनुचित कर्म नहीं होते। कुसंगत में भी बुरे कर्म के लिए उनकी आत्मा गवाही नहीं देती। बचपन में जो माता से शिक्षा प्राप्त होती है वह टीका के समान होती है जिनसे वह कुकर्म रूपी रोगों से बचा रहता है।

आज भारत में धार्मिक अध्यापकों की बहुत कमी हो गई है। पाठशालाओं में केवल भौतिक शिक्षा की प्रधानता है। माता-पिता आचार्य के प्रति कैसा व्यवहार करना चाहिये कुछ भी नहीं बताया जाता। कैसी शिक्षा से चरित्र का निर्माण हो सकता है इस सम्बन्ध में भी विद्यार्थियों को कुछ भी ज्ञान नहीं कराया जाता। यदि शिक्षा के क्षेत्र में 'रामायण, गीता और कुछ उपनिषदों के श्लोक उनके पाठ्यपुस्तकों में प्रस्तुत किये जाय तो इससे भी बहुत सुधार हो सकता है। अतः वैदिक शिक्षा के अभाव में बालक-बालिका अपनी भारतीय संस्कृति को भूलते जा रहे हैं और अंगरेजी=विदेशी भाषा की शिक्षा दीक्षा से पाश्चात्य सभ्यता को अपनाने लगे है। वेद कहता है कि:

'उतिष्ठ स्वध्वरावानो देव्या धिया। दृशेच मासा वृहता सुशक्वनिराग्ने याहि सुशस्तिभिः। (यजु. 11.41)

विद्वान लोगों को चाहिए कि शुद्ध विद्या और बुद्धि के दान से सब मनुष्यों की निरन्तर रक्षा करे क्योंकि अच्छी शिक्षा के बिना मनुष्यों के सुख के लिए और कोई भी आश्रम नहीं है। इसलिए सबको उचित है कि आलस्य और कपट आदि कुकर्मो को छोड़ के विद्या के प्रचार के लिए सदा प्रयत्न किया करे।

अतः स्पष्ट है कि सभी उन्नतियों का केन्द्र शिक्षा है। शिक्षा दो प्रकार की होती है-भौतिक और आध्यात्मिक। वर्तमान शिक्षा केवल भौतिक होने से, भूत से उत्पन्न पदार्थो का ही ज्ञान कराया जाता है पर आध्यात्मिक ज्ञान जिस वेद दिशास्त्रों में सत्य, अहिंसा, अस्तेय=चोरी न करना, न्याय पूर्वक भोग, योगाभ्यास, सबसे मैन्त्रिमाव, अक्रोध, नैतिक आदर्श और नारी सम्मान का आदेश है। इन सब उपदेशों से वंचित रखा जाता है। तात्पर्य यह कि जो परस्पर सबको शान्ति का दर्शन कराता है और अधर्म तथा अनैतिक कार्यो से पृथक रखता है ऐसी उत्तम शिक्षा को आधुनिक शिक्षा में सम्मिलित नहीं किया गया है। जिसका परिणाम यह हुआ कि मनुष्य शिक्षित होकर भी भौतिक भोग के कर्म में इतना लिप्त है कि उसे जीवन का उद्‌देश्य क्या है? कुछ पता नहीं।

आज कहने की कोई आवश्यकता नहीं विदेशी सभ्यता एवं चलचित्रों आदि द्वारा जो नंगापन दिखाया जा रहा है उससे उसका प्रभाव विशेषकर नवयुवक, युवतितयों के ऊपर पड़ रहा है जिसका परिणाम-बलात्कार अपराध और भ्रष्टाचार जैसे दुष्कर्म-देश में बढ़ता ही जा रहा है। उनसे एवं उनकी सन्तति से उत्तम शिक्षा के न होने से देश की बिगड़ती हुई सामाजिक एवं राजनैतिक सुव्यवस्था में कभी सुधार नहीं हो सकता। जिस की मांग के बल अर्थ और विलासिता है।

आज विज्ञान के आविष्कार ने जहां एक तरफ तरक्की कर रहा है वहां-दूसरी तरफ मानव एवं चरित्र के निर्माण में बहुत पीछे रह गया है। आज सभी लोग धन के आगे धर्म को भूल गये हैं। जहां दोनों को साथ लेकर चलना चाहिये था वहां केवल भौतिक भोग में फंसता जा रहा है।

यहाँ धर्म का अर्थ केवल मूर्तिपूजा, मन्नत करना और घंटा-घड़ियाल बजाना नहीं है बल्कि उसका लक्षण वैदिक शास्त्रों में इस प्रकार है-**धृतिः क्षमादमोऽस्तेयं शौच मिन्द्रियनिगहः। धीर्विद्यासत्यमक्रोधोदशंक धर्म लक्षणम्॥** अर्थात्-घृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय निग्रह घीः (बुद्धि) विद्या सत्य और अक्रोध इन दशो का नाम धर्म है।

क्षमा का अर्थ अपराधी को क्षमा करना नहीं है। क्षमा का अर्थ जाति भेदभाव को भूलकर उनका सहायक बनना है। (रोग और अर्थ से असमर्थ मानव की सेवा भी एक धर्म है।) और सत्य से शरीर पवित्र नहीं होता, जल से होता है। जैसे जल से शरीर पवित्र होता है वैसे ही सत्याचरण से मन पवित्र होता है और जो जैसा है उसे वैसा ही देखना विद्या है। मूर्ति को मूर्तरूप में देखना विद्या है और उससे विपरीत उसे भगवान मानना अविद्या है। क्योंकि सर्वव्यापाक ईश्वर की कोई मूर्ति नहीं बन सकती। वेद में भी कहा है-'न तस्यप्रतिमाऽस्तियस्य पाम महदृशः॥

चरित्र- जिस व्यक्ति में नैतिकता, सदाचारिता, मैत्रीभाव और प्रियवाणी है वह चरित्रवान है। अर्थात धन के नष्ट हो जाने पर मनुष्य का कुछ भी नहीं बिगड़ता, स्वास्थय खराब हो जाने पर कुछ बिगड़ता है, लेकिन यदि चरित्र भ्रष्ट हो गया तो समझ लो सब कुछ नष्ट हो गया। धन फिर कमाया जा सकता है, स्वास्थ्य फिर सम्पादन किया जा सकता है, लेकिन भ्रष्ट हुआ चरित्र फिर कलंक रहित नहीं बनाया जा सकता। इसलिए मिस्टर हावेज ने कहा है-चरित्र एक शक्ति है, प्रभाव है। वह मित्र उत्पन्न करता है, सहायक और संरक्षण प्राप्त कराता है और धन, मन तथा सुख का निश्चित मार्ग खोल देता है।'

शिक्षा विषय- आजकल स्कूल एवं कॉलेजों के छात्र-छात्रायें, राजनीति करने लगे हैं। कोई किसी दल का समर्थक है तो कोई किसी का परिणाम उन लोगों में एकता नहीं रहती और जहां एकत्व भाव नहीं होता वहाँ शान्ति कैसे हो सकती है। आज से 70 वर्ष पहले विद्यार्थी लोग राजनीति नहीं करते थे। उस समय शिक्षा दीक्षा बहुत अच्छी होती थी। अध्यापक से लोग डरते थे, उनका मान सम्मान भी करते थे। उस समय स्कूल के लड़कों के लिए कोई प्राइवेट मास्टर नहीं होता था। सारे पुस्तकों के विषय स्कूलों में ही पढ़ाये जाते थे पर आजकल वैसा नहीं है, यदि छात्र लोग घर में प्राइवेट मास्टर के यहां न पढ़े तो परीक्षा में पास न हो सकें। सरकार के तरफ से मास्टरों को काफी वेतन मिलता है, पर स्कूल एवं कॉलेजों में कैसी शिक्षा दी जा रही है जिसके कारण उन्हें अलग से प्राइवेट मास्टर के यहाँ पढ़ना पड़ता है। इस सम्बन्ध में कोई निरीक्षण नहीं करता।

- मु.पो. मुरारई जिला-वीरभूम, पश्चिम बंगाल-731219

पिता का पत्र पुत्र के शिक्षक के नाम

मैं यह जानता हूं कि अभी उसे बहुत कुछ जानना है जैसे कि हर इंसान ईमानदार नहीं होता और हर कोई सच्चा नहीं होता। यही नहीं, उसे तो यह भी सिखना है कि जहाँ एक दुर्जन होता है, वहीं कोई नायक भी छिपा होता है और जहां कोई भ्रष्ट नेता होता है वहीं कर्त्तव्यनिष्ठ लीडर भी छिपा होता है।

प्रिय शिक्षक,

उसे सिखाना कि हर दुश्मन के बदले कहीं एक दोस्त भी होता है जानता हूँ कि इसमें वक्त लगेगा पर यदि कर सको तो उसे यह जरूर सिखाना कि कहीं पड़े मिले पांच डालरों के मुकाबले कहीं ज्यादा होती है मेहनत से कमाए एक डालर की कीमत। कृपया उसे कुछ खोना भी सिखाना और यह भी कि कैसे लिया जाता है जीत का आनन्द। यदि कर सको तो उसे ईर्ष्या से बचना सिखाना और सिखाना कि क्या होता है खिलखिलाहटों का रहस्य। यह बात वह जितनी जल्दी समझ जाए कि धौंस जमाने वालों को परे हटाना सबसे आसान होता है, और बता सको तो उसे बताना कि किताबों से कितना कुछ जाना जा सकता है। लेकिन साथ ही उसे सिखाना आकाश में उड़ती चीड़ियों के आनन्द को समझना उसे बताना कि कड़ी धूप में भी शहद की खोज में कैसे निकलती हैं मधुमक्खियां और पहाड़ की हरी भरी तलहटी में खिलते फूलों के होते हैं कैसे कैसे रंग। पढ़ाई के बारे में उसे समझाना कि नकल करके पास होने के बजाय लाख गुना बेहतर है फेल हो जाना। भले ही कोई आपको गलत ठहराए उसे सिखाना अपने विचारों पर भरोसा करना और भलों से भलाई ओर दुष्टों के साथ कड़ाई का व्यवहार करना। जब हर कोई भीड़ का हिस्सा बनने को उतावला हो। आप कोशिश करना कि मेरे बेटे में इतना आत्मबल हो कि खुद को भीड़ का हिस्सा बनने से रोक सके उसे सभी की बातें सुनने की शिक्षा देना पर यह समझ भी देना कि वह फालतु बातें भुला दें। संभव हो तो उसे दुःख में हंसना सिखाना उसे सिखाना की आंख में आंसू आना कोई शर्मीदंगी की बात नहीं। उसे निंदा का मजाक बनाना सिखाना और बताना चिकनी चुपडी बातों में फंसने से बचना। बताना कि कैसे दिखाई जाती है अपनी खासियत और जो उसकी कीमत लगाना जानते हैं, उन्हें पक्ष में करना पर साथ ही यह भी सिखाना कि वह अपने दिल और दिमाग पर कोई प्राइस टैग न टांगे। उसे सिखाना कि किसी जबर्दस्त भीड़ के सामने कैसे टिका जाता है अगर लगे कि वह सही है, तो कैसे अपने सच के लिए लड़ा जाता है। मैं चाहता हूं कि आप उसे जरा प्यार से समझाएं पर अपनी छाती से न लगाएं बताएं यह भी कि बहादुर बनने के लिए कितने धीरज की जरूरत होती है। उसे हमेशा यह सिखाएं कि सबसे अच्छा होता है खुद में भरोसा करना। बेशक आप से मैं काफी ज्यादा उम्मीदें लगा रहा हूं। जितना मुमकिन हो, उतना ही करना। सचमुच एक बेहद अच्छा बच्चा है मेरा बेटा। सौ साल पहले यह खत अमेरिकी राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन अपने बेटे के टीचर को भेजा था। क्या हम सब के लिए भी, और आज भी उतना ही प्रासंगिक नहीं है?

प्रेषक- श्री कीर्ति शर्मा उपप्रधान आर्य केन्द्रीय सभा, दिल्ली राज्य

चुनाव समाचार

आर्य समाज मकरपुरा रोड, बडोदरा, गुजरात

प्रधान- श्री आर पी वर्मा **मन्त्री**-डॉ. भगवान स्वरूप आर्य

कोषाध्यक्ष- श्री भवन आर्य दिलणी

आर्य समाज राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली

प्रधान- श्री अशोक सहगल **मन्त्री**- श्री सतीश मैहता

कोषाध्यक्ष- श्री सतीश कुमार

एक प्रेरणा

परिवार के एक बालक को गुरुकुल में पढ़ाएं

अथवा

गुरुकुल के एक ब्रह्मचारी का वार्षिक व्यय देवें

अन्तर्राष्ट्रीय उपदेशक महाविद्यालय टंकारा, जहां इस समय 250 ब्रह्मचारी अध्ययनरत हैं, जिन्हें वैदिक मान्यताओं के प्रचार एवं कर्मकाण्डीय संस्कारों हेतु तैयार किया जाता है। आज विश्व में कई ऐसी आर्यसमाजें हैं जहां इस उपदेशक विद्यालय के ब्रह्मचारी प्रचार कर रहे हैं, जिनमें ग्रेट ब्रिटेन, अमेरिका, गुआना, साउथ अफ्रीका, मॉरीशस, फीजी आदि देश प्रमुख हैं।

पाश्चात्य सभ्यता को मुंहतोड़ उत्तर देने के लिए यह आवश्यक है कि सुयोग्य धर्माचार्यों की संख्या अधिक से अधिक हो और हमारा युवा वर्ग इनके संदर्भ में आवे और वह अपनी मूल सभ्यता से जुड़े। आप सभी दानी महानुभावों से प्रार्थना है कि अपनी आने वाली पीढ़ी को वैदिक संस्कारों से ओत-प्रोत करने हेतु इन ब्रह्मचारियों के एक वर्ष के अध्ययन का व्यय दान स्वरूप ट्रस्ट को दें। यह ऋषि ऋण से उऋण होने में आपकी आहुति होगी।

एक ब्रह्मचारी का एक वर्ष का अध्ययन/वस्त्र/खानपान का व्यय 11,000/- रुपये है।

आपसे प्रार्थना है कि अपनी ओर से अथवा अपनी संस्थाओं की ओर से कम से कम एक ब्रह्मचारी के अध्ययन व्यय की सहयोग राशि **'श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा'** के नाम चैक/ ड्राफ्ट केवल खाते में दिल्ली कार्यालय के पते पर भिजवाकर पुण्यार्जन करें। **टंकारा ट्रस्ट को दी जाने वाली राशि आयकर से मुक्त है।**

-: निवेदक :-

सत्यानन्द मुंजाल (मैनेजिंग ट्रस्टी/प्रधान) **शिवराजवती आर्या** (उप-प्रधाना) **रामनाथ सहगल** (मन्त्री)

तिलक लगाना वैदिक अथवा अवैदिक?

❐ स्व. मुनि डॉ. योगेन्द्र कुमार शास्त्री

इस विषय में सिद्धान्त दक्षिणी सभा द्वारा भी दिल्ली में निर्णय हुआ था तथा धर्मार्य सभा में भी चर्चा हुई थी।

यह सच है कि महर्षि दयानन्द सरस्वती ने यज्ञ प्रकरणः में मौली बांधने का तथा तिलक लगाने का विधान नहीं किया है। ग्यारहवें समुल्लास में साम्प्रदायिक तिलकों का खण्डन भी किया है।

मौली की प्रथा शास्त्रीय नहीं है यह लोकरीति के अनुसार प्रचलित है। जैसे वर-वधू के हाथ में गाना (कंगना) बांधा जाता है उसमें छल्ला, कोड़ी, आदि बांध देते हैं, उससे उनकी पहचान बन जाती है कि इन दोनों का विवाह हो रहा है। इसका विधान यदि आप वेद में या गृह्य सूत्रों में ढूढेंगे, तो नहीं मिलेगा। यह लोकरीति है।

विवाह में ऐसी अनेक लोकरीतियां प्रचलित हैं। इनका प्रमाण वेदों में या वैदिक साहित्य में नहीं मिलेगा।

मध्यकाल में मौली बन्धन का प्रचलन ब्राह्मणों के द्वारा क्षत्रियों को रक्षाबन्धन के उपलक्ष्य में रक्षार्थ राखी के रूप में प्रचलित हुआ। पहले मौली ही राखी के रूप में बहनें भाइयों को स्वकीय रक्षार्थ बांधा करती थीं। यह प्रचलन मध्यकालीन है। वैदिक कालीन नहीं। इसी प्रकार यजमान की पहचान के रूप में कि ये इस यज्ञ के यजमान हैं दर्शक जान सकें, मौली बांधी जान की अशास्त्रीय परम्परा चली। यहाँ तक कि कुम्भ को भी मौली बांधी जाने लगी कि यह कुम्भ यज्ञ कर्म के लिए ही है, इसका प्रयोग जल पीने आदि के लिए नहीं करना है। परन्तु ये कर्म यज्ञ के लिए अनिवार्य नहीं हैं।

यज्ञ में यजमानों को तथा विद्वानों को माल्यार्पण किया जा सकता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने समावर्तन संस्कार में आचार्य को माल्यार्पण करने का विधान किया है। उसी संस्कार में नहाने के बाद और वस्त्र धारण करने के बाद चन्दन लेपन का विधान भी किया है।

यदि माथे पर गर्मियों में चन्दन लेपन किया जावे तथा सर्दियों में केसर का लेपन माथे पर कि जावे तो गर्मियों में शीतलता तथा सर्दियों में उष्णता का लाभ होता है तथा सुगन्धि भी मिलती है। यह आयुर्वेद की दृष्टि से लाभकारी प्रक्रिया हो सकती है। गर्मियों में चन्दन का तिलक लगा सकते हैं और सर्दियों में केसर का तिलक लगा सकते हैं। परन्तु रोली या सिन्दूर का तिलक लगाना व्यर्थ है। ऐसा नहीं करना चाहिए। यदि तिलक लगाने के साधन नहीं है तो केवल माल्यार्पण से काम चल सकेगा। प्राचीन काल में में राजतिलक भी चन्दन या केसर से ही किये जाते थे। जब राजा युद्ध में लड़ने के लिये जाता तब भी उसको तिलक लगाकर विदा किया जाता था। यही प्रथा विद्वानों के आदर के लिए चल पड़ी। उसी प्रकार जिस प्रकार जयमाला क्षत्रिय कन्याएं वर को पहनाती थी। वर जयमाला लड़की को नहीं पहनाता था परन्तु आज प्रत्येक जाति के विवाह में वरवधू दोनों एक दूसरे को जयमाला पहनाते हैं। यह सब देखादेखी चल पड़ता है।

महर्षि ने जिन तिलकों का 11वें समुल्लास में खण्डन किया है वह साम्प्रदायिक तिलकों का खण्डन है। वैष्णवों में भी कितनी भिन्नता है यह दिखाने के लिए महर्षि लिखते हैं-

अब जैसा वैष्णवों में फूट टूट भिन्न-भिन्न तिलक कण्ठी धारण करते हैं। रामानन्दी वगल में गोपीचन्दन, बीच में लाल, नीमावत दोनों पतली रेखा, बीच में काला बिन्दु, माधव काली रेखा और गौड़ बंगाली, कटारी के तुल्य और राम प्रसाद वाले दोनों चांदला रेखा के बीच में एक सफेद गोल टीका इत्यादि। रामानन्दी लाल रेखा को लक्ष्मी का चिन्ह और नारायण के हृदय में (गोसाई) श्री कृष्ण चन्द्र के हृदय में राधा जी विराजमान इत्यादि कथन करते हैं।

महर्षि ने ऐसे धार्मिक चिन्हों का तिलकों का खण्डन किया है क्योंकि केवल तिलक लगाने से कोई धार्मिक नहीं बन जाता मनुस्मृति में लिखा है-**''न लिंगमात्र धर्म कारणम्''** केवल निशान धारण करने से कोई धार्मिक नहीं बन जाता महर्षि ने वहीं भक्तमाल की कथा लिखी है। जिसमें मरने के बाद पक्षी की बीठ माथे पर तिलकाकार हो जाती है और वह वैकुण्ड चला जाता है। ऐसा कोई फल तिलक से मिलना असम्भव है।

ऐसे तिलक वस्तुतः निन्दनीय हैं परन्तु यज्ञ में कोई माथे पर चन्दन लगाता है या केसर लगाता है स्वास्थ्य की दृष्टि से उसे समयानुकूल शीतलता या उष्णता मिलती है तो यह साम्प्रदायिक नहीं कहा जा सकता।

अन्त में यह कहूंगा कि सार्वदेशिक धर्मार्थ सभा में तिलक और मौली को यज्ञ का आवश्यक अंग स्वीकार नहीं किया गया। केवल ऋत्विक वरण से और संकल्पपाठ से काम चल सकता है। सम्मानार्थ माल्यार्पण कर सकते हैं। यदि मालाएं नहीं है तब भी कार्य चल सकता है। ऋत्विक वरणार्थ वस्त्र सुवर्णादि द्रव्य भी दे सकते हैं।

अब देखिये यज्ञ की समाप्ति पर फूलों की वर्षा से आशीर्वाद दिया जाता है। यह आशीर्वाद की विधि न तो किसी वेद में है और न किसी गृह्य सूत्र में है। महर्षि ने भी संस्कार विधि में कहीं पर भी ऐसा आशीर्वाद का तरीका नहीं लिखा है। फिर भी यह हो रहा है जो नहीं होना चाहिए। आशीर्वाद के दो ही तरीके महर्षि दयानन्द सरस्वती के मिलते हैं-एक तो यह कि सभी जाने आशीवर्चन बोलें जैसे-सीमन्तोन्नयन में-ओं विरसूस्त्वं भव, जीवसूस्त्वं भव, जीव पत्नी त्वं भव।। गो. ग. 2-7-12 जैसे नामकरण संस्कार में-

हे बालक! त्वमायुष्मान् वर्च्चस्वी, तेजस्वी श्रीमान भूयाः।

विवाह में-ओं सौभाग्यमस्तु ओं शुभं भवतु।। इन आशीर्वादों में कहीं पर भी फूलों की अनुमति नहीं है।

दूसरा तरीका यह हो सकता है कि जलकुम्भ से जल लेकर यजमानों के सर पर छिड़कें। देखिये ऐसी विधि महर्षि ने विवाह प्रकरण में लिखी है।-''सप्तपदी के बाद-वह पुरुष उस पूर्व स्थापित जलकुम्भ को लेके वधू के समीप आवे और उसमें से थोड़ा सा जल लेके वधूवर के मस्तक पर छिड़कावे।''

इस विधि के मन्त्र हैं-ओं आपोहिष्ठा- ऋ.10.6.1 तथा ओं आपः शिवाः-पर.1.8.5।

अस्तुः व्यवस्था कहीं शास्त्रोक्त होती है कहीं परिस्थितियों के अनुसार होती है और कहीं आपदधर्म के अनुसार होती है। जैसे उपनिषद् में महाराज जनक याज्ञवल्क्य से कहते हैं- वेत्थ अग्निहोत्र? तुम यज्ञ के विषय में जानते हो? वह कहते हैं कि जानता हूँ। उन्होंने क्रम से बतलाया कि यज्ञ इदू के होने पर घृतादि से होता है। यदि दूध न हो तो वनस्पतियां से यदि वनस्पति न हों तो औषधियां से यदि औषधि न हो तो जंगल

की औषधियों यदि वे न हों तो जल से यदि जल न हो तो श्रद्धापूर्वक यज्ञवेदी में बैठकर उस सत्य को स्मरण करो।

महर्षि ने भी ऐसी व्यवस्थाएं दी हैं- सन्ध्या के समय जल हो तो आचमन करे यदि जल नहीं है तो न करे। देखिये पंच महाविधि के सन्ध्योपासन विधि में। इसी प्रकार वहीं पर मार्जन प्रकरण में लिखते हैं-तब कुशा वा हाथ से मार्जन करे। यदि आलस्य न हो तो न करे।

देखिये यज्ञ में महर्षि ने लिखा है कि स्विष्टकृत आहुति मीठे भात से दो यदि वह नहीं है तो घृत से ही दो।

इसी प्रकार पूर्णाहुति में क्रमश: तीन चम्मच भरकर घी की तीन आहुति देवें। उसके बाद जो घृत वचता है उसे यज्ञशेष कहते हैं। धाराबांधकर उसे यज्ञ में डालने का विधान नहीं है जो **वसो: पवित्र मसि** मन्त्र से ऐसा करते हैं वे विधिहीन कर्म करते हैं।

महर्षि संस्कार विधि के सामान्य प्रकरण में पूर्णाहुति प्रकरण में लिखते हैं- स्त्री पुरुष .... घृत, वा मोहन भोग को प्रथम जीम के पश्चात रूचिपूर्वक उत्तमान्न का भोजन करें। यहां यज्ञशेष की व्याख्या स्पष्ट है।

अन्त में मैं यह कहूंगा कि आप जो भी कर्मकाण्ड सम्बन्धी कर्म करें उसका शास्त्रीय, तार्किक बौद्धिक और वैज्ञानिक समाधान आपके पास अवश्य होना चाहिए। यहाँ कुछ बातें प्रसंग से हटकर जानकारी के लिये लिख दी हैं।

– म.न. 132, पुराना हस्पताल, जम्मू-180001

सफल एवं शांतिपूर्ण जीवन के कुछ सिद्धान्त

❑ डॉ. लक्ष्मण सिंह टांक

आजकल अनेक साधु-संत, गुरु उलेमा, मौलवी एवं फकीर आदि अपने प्रवचनों से दिग्भ्रमित जनता को सुख व शांतिपूर्ण जीवन हेतु उपदेश देते हैं और गुरु मंत्र भी देते हैं। परन्तु खेद है इनके प्रवचन पर उपदेश कुशल बहुतेरे, जो आचारियों ते नर न धनेरे की उक्ती को ही चरितार्थ करते हैं। मैं अपने अनुभव के आधार पर मनुष्य के सुखमय शांति पूर्ण एवं सफल जीवन के कुछ सिद्धांत बता रहा हूँ और मुझे पूर्ण आशा है कि इनको अपनाकर मनुष्य सुखद अनुभूति अवश्य करेगा।

❑ ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, सर्वशक्तिमान, निराकार, न्यायकारी, सर्वाधार, दयालु, अजर, अमर और सृष्टिकर्ता है। अत: इसी विचार को मन में रखते हुए किसी भी रूप में उसी की उपासना अराधना एवं स्तुति करनी चाहिए।

❑ अपने बहुमूल्य समय के 24 घंटे में से प्रात: एवं सायं काल 10-15 मिनट का समय निकालकर परमेश्वर की स्तुति करनी चाहिए तथा सर्वदा सद्बुद्धि और मानव कल्याण की कामना करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त लगभग आधा 1 घंटा स्वस्थ रहने के लिए भी शारीरिक क्रियाये और प्रतिक्रियायें करनी चाहिए।

❑ काम, क्रोध, मद, लोभ एवं मत्सर ईर्ष्या प्रत्येक जीव मानव के लक्षण है। इनको पूर्णत: समाप्त करना तो असम्भव है परन्तु लगातार अभ्यास और प्रयास से इनको न्यूनतम से न्यूनतम करने की मानसिकता रहनी चाहिए। जिन व्यक्तियों ने ऐसा किया है वे महान पुरुष बने है जिनको हम स्मरण करते हैं। प्रत्येक मनुष्य को ऐसा करने का भरसक प्रयास करना चाहिए।

❑ मन, वचन, कर्म में जितनी भी समन्वयता आती जायेगी व्यक्तित्व उतना ही निखरता जायेगा। प्रत्येक को इसके लिए प्रयासरत रहना चाहिए।

❑ मनुष्य भौतिक रूप से न तो अपने साथ कुछ लाया है और न साथ लेकर जायेगा। परन्तु अध्यामिक रूप से मनुष्य अपने साथ अपना प्रारब्ध, भाग्य एवं पूर्व जन्मों का कर्मपल लेकर आया तथा इस जन्म के कर्मफलों को अपने साथ लेकर जायेगा। अत: मनुष्य को सर्वदा सत्कर्म करने चाहिए। प्रत्यक्ष रूप से प्रत्येक परिवार में देखने में आता है कि सभी भाई बहन एक ही परिवार एवं परिवेश में रहते हुए अलग अलग मानसिकता एवं प्रवृति के हो जाते हैं।

❑ जिस भी ईष्ट की व्यक्ति उपासना व अराधना करता है उसके गुणों को अपने में पैदा करना तथा उनका अनुशरण करना ही उस इष्ट की सच्ची उपासना होती हैं उपासना चरित्र की होनी चाहिए न कि चित्रों की।

❑ मनुष्य को अपने दुष्कर्मों एवं अवगुणों से डरना चाहिए। अत: सर्वदा किसी कार्य को करते समय उसकी सत्यता, अच्छाई-बुराई व गुण-अवगुणों को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए। सत्याचरण मनुष्य को आत्मिक बल प्रदान करता हैं मनुष्य के हर कर्म को ईश्वर या उसका ईष्ट देख रहा है।

❑ मनुष्य को सर्वदा पर पीड़ा, पर निंदा एवं दुर्व्यसनों से बचना चाहिए।

❑ व्यक्ति को सर्वदा अच्छे ज्ञानवर्धक, प्रेरणा स्त्रोत साहित्य को पढ़ना चाहिए तथा अच्छी संगत में ही रहना चाहिए। संगत का मनुष्य पर बहुत बड़ा प्रभाव होता हैं। रामायण और गीता अवश्य पढ़नी चाहिए।

❑ प्रत्येक मनुष्य को अपने कर्त्तव्य का पूर्ण निष्ठा एवं ईमानदारी से निर्वाह करना चाहिए।

❑ समय अति गतिशील है। अत: समय की बर्बादी नहीं करनी चाहिए। बीता समय कभी वापिस नहीं आता है।

❑ मनुष्य को प्रतिस्पर्द्धात्मक होना चाहिए न कि ईर्ष्यालु। सच्चे मन व श्रम से कर्म करना चाहिए यह भी सोचना चाहिए कि समय से पूर्व व भाग्य से अधिक कुछ मिलने वाला नहीं।

❑ अपने बहुमूल्य समय मे से कुछ समय अपने परिवार को भी देना चाहिए तथा एक दूसरे की परेशानी व उसके समाधान पर विचार विमर्श होना चाहिए। विशेष रूप से पुत्र-पुत्रियों की समस्याओं से सुनना उनका समाधान उनकी संगत पर विशेष ध्यान देना, विशेष रूप से किशोर अवस्था में परिवार के साथ-साथ अपने पड़ोसियों व सहकर्मियों से भी यथा योग्य सद्व्यहार करना चाहिए।

❑. कभी भी ओझाओं, तांत्रिकों, मुल्ला-मौलवियों और अन्य इस प्रकार के व्यक्तियों के चक्कर में नहीं पड़ना चाहिए। इनके पास तुम्हें देने को कुछ नहीं है। इसके विपरीत आप को दिग्भ्रमित कर लूटने व गलत रास्ते पर पहुंचाने के लिए बहुत कुछ है।

❑ यदि कभी दिग्भ्रमित की स्थिति पैदा हो जाये तो मनुष्य को धैर्य व साहस से काम लेना चाहिए व अपने से योग्य, बुद्धिमान व अनुभवी शुभचिंतकों से विचार विमर्श कर समाधान निकाल लेना चाहिए। मानव जीवन बार-बार नहीं मिलता है। अत: कभी भी हीन भावना से ग्रस्त नहीं होना चाहिए। हीन भावना मनुष्य को पतन की ओ ले जाती है। सर्वदा सकारात्मक सोच ही रखनी चाहिए। ऐसी अवस्था में एकान्त से बचना चाहिए।

❑ संतोषी, मनुष्य को होना चाहिए। संतोष के सामने सब धन धूलि के समान है।

– सी.सी. कॉलेज अध्यक्ष नामदेव, धर्मशाला शुक्रताल (मुजफ्फनगर)

ધર્મ-ચાનક

પ્રસ્તુત લેખ ધર્મચાનક નામની પુસ્તિકા કે જેનું પ્રકાશન ઇ. સ. ૧૯૧૪માં થયું હતું તેનું સમ્પાદન છે. આજની તારીખમાં પણ વિષય એટલો જ મહત્ત્વનો છે એમ કહેવા કરતા વિષયનું મહત્ત્વ એ સમય કરતા પણ વધી ગયું છે એમ કહેવું યોગ્ય રહેશે.

પ્રસ્તુત ચાબખા ચોપાઈની ભાષા, જોડણી વિગેરે લગભગ જેમના તેમ રાખ્યા છે, આજની દૃષ્ટિએ એમાં અનેક ભૂલો હોઈ શકે છે. આ ચાબખા ચોપાઈ વાંચતા જણાશે કે એ વખતના આર્યો કેટલા જાગૃત હતા અને આજે આપણે ક્યાં છીએ

રમેશ મહેતા મો. ૦૯૪૨૭૦૦૧૧૧૯ / Email:- pt.rammehta@gmail.com

ગયા અંકથી આગળ

જન્મ મરણ છે ભારે દુઃખ, હરી સરણ વણ નાવે સુખ
આગળની વિચારો પેર, જન્મ મરણ તે કાળો કહેર.
તે દુખનો કરૂં વિસ્તાર, તો તો તેનો નાવે પાર,
માટે કહું છું હું, ટુંક ચેતવવાની આ ચાબુક,
ગાંડો બોલું ગમે તેમ, લેખ જ લખીયા ફાવ્યું જેમ.
ચાહ્યા માનો ખોટું કે ખરૂં, કંટાળો તે મેલો પરૂ
હું પીરસણ પીરસનાર, ભાવે તે જમો જમનાર.
પીરસનારો પીરસે વટે, સૌ સામગ્રી મુકવી ઘટે,
ભાવતી વસ્તુ લેજો જમી, ન ભાવે તો રાખો સમી.
વ્હાલું જેને જે જે જમણ, તે તે કરશે તેમાં ભ્રમણ.
કરમ પ્રમાણે બુદ્ધિ હોય, વિશેષ ક્યાંથી લાવે કોય
જેટલી બુદ્ધિ તેટલું કર્મ, ક્યાંથી સમજે ઝીણો મર્મ.
લક્ષ્મી માટે જે લપોડ, તે સમજે આ માથો ફોડ.
ધંધા ધારીમાં છે ચાક, ધર્મ જ્ઞાનમાં લાગે થાક.
તે જીવનો ભોમી પર ભાર, કેમ વંજા ન રહી જણનાર.
કાળે મુખ અવનીમાં ફરે, ના તરવા દે ને ના તરે.
ઈશ્વરનું તો નથી કામ, ધરવું છે ભગતમાં નામ.
જ્ઞાન થવા છે આ વિદ્યાય, નિરભાગી કરશે નીંદ્યાય.
વાંચી સમજી કરજો ક્યાસ, સમજવામાં શો છે ત્રાસ.
સમજવાની ખુંચો કહું, તેથી વિચાર પડશે બહુ.
અવળુ ચાલ્યું કળજુગ મહી, તે સૌ સવળુ સમજે નહીં.
વાંચે શીખે સાંભળે સદા, તો પણ કહેશે ગોવવી ગદા.
મનમાં તો બાંધે છે તોલ, પણ તે બોલે આડા બોલ
સમજવાનો કહુ સંદેહ, અવળુ નવ્ય સમજશો તેહ.

જુઓ જગધીશ જગનનાથ, જગત્પતિ તે છે જગ તાત.
અંબીકા અવનીની માત, તે બેની જાણો છો વાત.
ધન્યધન્ય રે મા અંબા સતી, ભૂખ્યાનું મ્હોં જોતી નથી.
જગધીશમાં નહીં એકાદશી, તેને પટં વાશી વશી.
માત તાતથી ઉલટા થૈ, એકાદશી કરવી બૈ.
માબાપે કર્યું તે કરૂં, કૈં આપણું ધારેલું ખરૂ.
બે બાજુની આંટી પડી, જંપ નથી વળતો એક ઘડી.
આ જૈ પુછો ગુરૂ કને, કહે વલ્લભ સમજાવો મને.

ઉપવિત વિપ્રો ધારણ કરે, બાર માસે સરિત સંચરે.
બળેવનો દિવસ તે ગણે, ગાયત્રીના મંત્રો ભણે.
પ્રાયશ્ચીત ગોર કરાવે આપ, નાશ કરે કરેલું પાપ.
કર્યું હોય અભક્ષાભક્ષ, વિધવા ગમન કરેલા લક્ષ.
કુંવારકા સંગે વૈભોગ, પશુ ગમન બેઠેલો યોગ.
તે સઘળા પાતક બળી જાય, ગોર ગુરુ એમ કહે છે ત્યાંય.
આ વાયક જો સાચું હોય, તો પાતક કરજો સૌ કોય.
બારે મહીને બળી જશે, તો વિપ્રોને ગમતું થશે.
પાપનો ભય મનમાં નહીં રહે, તેથી અવળે મારગ વહે,
નહીં કરવાનું કરશે તેહ, વલ્લભને રે છે સંદેહ.

નાગ પાંચમનો આવે દન, નાગ ચિનનું કરે પૂજન,
લાંબા થૈ થૈ લાગે પાય, પ્રસાદ ધરીને બહુ હરખાય.
ખરો નાગ પધારે ઘેર, પકડવા કરે બહુ પેર,
દાભી ઝાલી કબજે કરે, નગ્ન બહાર મૂકવા સંચરે,
આ દુનિયાનો કેવા ન્યાય, કળજુગે ખોટાને ચહાય.
ખરાના તો દુશ્મન બને, અવળ જ્ઞાન આ દુનિયા કને,
ખોટાને માને છે જગત, કાં ભણેલા ને કાં ભગત.
કળીમાં જગત કરે છે જેહ, સૌ ખોટે ખોટું છે તેહ.
જે ખોટું તે માન્યું ખરૂં, ખરૂં હતું તે મૂક્યું પરૂં.
કોઈ સાચું સમજાવા જાય, તેને સૌ કરડવા ધાય.
જેમ બાળને પ્રિય પય પાન, છોડાવતા કરે તોફાન.
તેમ અવળું છોડાવે જવ, દુનિયા તોફાન માંડે તવ.
માટે સમજુ સમજી રહે, જૈ પુછો ત્યારે કહે,
તેથી કરજો પુછવા પેર, વદે વલ્લભ પડશે લહેર

મુનશા દેહ અમુલ્ય અવતાર, કરે શાસ્ત્ર પુરાણ પોકાર.
પશુ પક્ષી તેથી ઉતરે, તે વારતા સૌ કબુલ કરે..
તેમ છતાં સૌ અવળા વહે, તે શંકા મનમાં બહુ રહે,
પરવડીયોમાં નાંખે અન્ન, ખાય શિશકોલા પક્ષી જન.
ઢાંકાઢુંકા ઘરમાં કરે, ઉંદર ઘરના ભૂખે મરે,
ચાંચડ માંકણ મચ્છર ઘરે, તેને પકડી અળગા કરે.
કાં તો પકડી વાળે દાટ, જુઓ ધરમીજનનો ઘાટ.
લોકોને દેખાડવા કાજ, ઘરમાં ઘંટા બહાર અનાજ.
કહો ભાઈ તે ધર્મ કે કર્મ, ન્યાય વડે સમજાવો કોઈ.

પક્ષીને ઝીણો જીવ આર, કરે ભક્ષ દૈ ચંચુ માર,
માંસ માટી શ્રોણીત ફળ અન્ન, ઘણા જીવ કરે પ્રાસન.
પશુ ભક્ષે માંઉસને હાડ, અન્ન વિષ્ટા વળી ઘાંસને ઝાડ.
હિંદુ મનુષ અવર નવ ખાય, તેને ન દે કણુકા કાંય,
કહેશે માંગી ભીખી ખા, અક્કરમી અહીંથી તું જા.
કેવો અવળો લે છે અર્થ, મુનષને દેવું તે વ્યર્થ.
મનુષ માંગી ભરશે પેટ, કાં તો કરશે પરની વેઠ.
કહેનારો કાંઈ દેતો નથી, તો બીજો કેમ દેશે રતી.

મનુષને મનુષ પર દ્વેષ, પશુ પક્ષી પર પ્યાર હંમેશ.
જાતી ઉપર ઝાઝુ ઝેર, વિજાતી પર પુરણ મ્હેર.
જે જીવનો જ્યાં હોય પ્યાર, તે જીવ ત્યાં લે છે અવતાર.
જે જે જીવની જ્યાં જ્યાં મતિ, તે તે જીવની ત્યાં ત્યાં ગતી.
આ અવળું કે સવળું ભાઈ, તોલ કરી જુઓ મન માંઈ,

મનુષ દેહ દુર્લભ છે ઘણો, વિખવાદ કરતા સૌ તે તણો.
વન જીવનું પુરું કરે, માનવીનું પેટ માનવી ભરે.
વનમાં હાથી ઊંટેઅનેક, ત્યાં દેવા ગયો કોણ એક.
જગમાં દેણ ઊંધું વળે, વ્યાસ વદે શું સંદે ટળે.

अग्नि देव की व्याख्या

❒ **पुरुषोत्तमदास**

ऋगवेद जो संसार में सबसे अग्रणि मनुष्य मात्र व समस्त प्राणिमात्र को सुख, साधन, विज्ञान और समस्त प्रकार के ज्ञानों का भंडार कहलाया उसमें वर्णित प्रथम अध्याय में व्याख्यान पर हम सबको ध्यान दिलवाकर जो हमें अग्रणि बनने का आह्वान करता है:-

''तमीलृत प्रथमं यज्ञसाधं विश आरीराहुतमृज्जसोनम्।
ऊर्जः पुत्रं भरतं सृप्रदानुं देवा अग्नि धारयन्द्रविणोदाम्।''

ऋ 1.7.3.3.

शब्दार्थ है मनुष्यों ''तमीलृत'' उस अग्नि की स्तुति करो, कि जो प्रथमम् सब कार्यों से पहिले, वर्तमान और सबका आदि कारण है तथा यज्ञ साधनम् सब संसार और विज्ञानादि यज्ञ का साधन (सिद्ध करने वाला है। सबका जनक है। विशः प्रभु मनुष्यों में उसी को स्वामी मानकर ''आरी'' प्राप्त हो और जिसको अपने दीनता से पुकारते हैं, विज्ञानादि से सिद्ध करते और जानते हैं। वही 'ऊर्जा' पुत्र भरतम् पृथिव्यादि जगतरूप अन्न का पोषण, पालन और धारण करने वाला है। 'सृप्रदानुम्' सब जगत को चलने की शक्ति देने वाला और ज्ञान का दाता है। उसी की देवा अग्नि धारयन् द्रविणोदाम् देव (विद्वान लोग) अग्नि कहते हैं और धारण करते हैं। वही सब जगत् को द्रविण अर्थात् निर्वाह से सब अन्न जलादि पदार्थ और विद्यादि पदार्थों को देने वाला है, उस अग्नि परमात्मा को छोड़कर अन्य किसी की भक्ति या याचना कभी किसी को न करनी चाहिए। पंजाब में गेहूं/अन्नादि का नाम कनक रखते हैं कनक नाम स्वर्णादि चमकीले पदार्थ के लिए भी आता रहा है दोनों की उपयोगता का जीवन में महत्व रहा है।

भारत जो सदियों से कृषि प्रधान देश रहा है और सबका भरण पोषण पालन करता आ रहा है तभी वह आज तक 'भारत' कहलाने का साक्षी बना रहा। बिना सूर्य की अग्नि ऊर्जा के कैसे फसल तैयार होगी जरा अनुमान लगायें अमरीका, कनाडा, रूस आदि अतिशीतोष्ण-कारी देशों में सूर्यदेव की अग्नि ऊर्जा का महत्व जो समस्त फल, फूल, सब्जियों में रस घोलकर मधुर बनाकर प्राणियों का भरण पोषण कर रहा है। आज हमें सौर्य ऊर्जा से बिजली बनाने में महारथ प्राप्त हुई और पवन ऊर्जा से पवन चक्कियों द्वारा भी बिजली का उत्पादन करा करा मानव का कल्याण कर यह भौतिक अग्नि हमें स्वादिष्ट भोजन तक पका कर मानवमात्र की सेवा कर रही है। इसकी महिमा को समझकर, ज्ञान विज्ञान के द्वारा हमारी सर्व कल्याणकारी पूज्या सुख साधनों की सिद्धि करती आ रही है। शक्ति की पूजा सर्वोपरि है। वेद में बार-बार सूर्य देवता को नमस्कार करने और उसके दिव्य गुणों का गुणानवाद वर्णित है जो समस्त भूमण्डलों में व्याप्त हुआ और अनन्त शक्ति, प्रकाश, पर्जन्य प्राणियों को सुखी व समृद्धि प्रदान करता आया है। ज्ञान रूपी प्रकाश का गुणानवाद महर्षि दयानन्द जी स्वामी को प्राप्त अपने गुरु परम्परा द्वारा प्राप्त होकर इस संयासि ने वेदों के ज्ञान और विज्ञान-परम अर्थों द्वारा हमें सही सही अर्थों में प्रदान कर कर, भारत की महान् वैदिक संस्कृति को भौतिक ज्ञान, ज्ञानपरक बना, समझाया जो ज्ञान आज सूर्य की तरह प्रकाशित हुआ और सारे विश्व की सेवा प्रकाशित व प्रभावित कर रहा प्रतीत हो रहा है। देव तुल्य विश्व-बन्धुत्वता का संदेश समझकर पूर्णानन्द में व्याप्त है। वैदिक साहित्य में जगह जगह मेघा बुद्धि की कामना कर हमारा जीवन विज्ञानमय, सुखद और स्वस्थ परम्परावादि बनाने की सलाह दी गई है, गायत्री मन्त्र में भी यही सद्बुद्धि की कीमना प्रभु से निरंतर प्राप्त कर हमारा जीवन समृद्धशाली बनना बनाना बताया है।

गीता के मर्मज्ञ डॉ. राधाकृष्णन् जी के विचार मनन करने व प्रेरणा दे रहे है ''चिड़ियों की तरह हवा में उड़ना और मछलियों की तरह पानी में तैरना'' सीखने के बाद, अब हमें इंसानों की तरह जमीन पर चलना सीखना है। देश का खोया हुआ वैभव लौटाना है जिस पर हम गर्व करते आ रहे हैं, जो हमारे वैदिक काल की ख्याति व धरोहर रही हैं। शक्तिशाली बनकर व राष्ट्र को बनाकर ही भारत की स्वर्णिम महिमा की पहिचान सदा से रही है।

- एस-8बी, कबीर मार्ग, जयपुर-16

टंकारा गौशाला में गौ-पालन एवं पोषण हेतु अपील

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा स्थित गौशाला में दान स्वरूप प्राप्त गौ से जहां एक ओर ब्रह्मचारियों हेतु दूध प्राप्त हो रहा है, वहीं बढ़ती गायों के पालन-पोषण हेतु ट्रस्ट पर आर्थिक बोझ पड़ रहा है। आपकी जानकारी हेतु गौशाला से प्राप्त दूध को बेचा नहीं जाता है। ऐसी स्थिति में आप सभी आर्यजनों, दानदाताओं, गौभक्तों से प्रार्थना है कि इस मद में ट्रस्ट की सहायता करने की कृपा करें। एक गाय के वार्षिक पालन-पोषण पर **5000/-**रुपये व्यय आ रहा है, जिससें हरा चारा एवं पौष्टिक आहार जो चारे में मिलाया जाता है तथा गौशाला का रखरखाव सम्मिलित है। आप सभी महानुभावों से निवेदन है कि इस पुण्य कार्य में अपनी श्रद्धानुसार राशि भेजकर पुण्यार्जन करें। आप इस पुण्य कार्य के लिए राशि **श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा, के नाम केवल खाते में आर्य समाज (अनारकली), मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-110001** के पते पर पर भिजवाकर कृतार्थ करें। **टंकारा ट्रस्ट को दी जाने वाली राशि आयकर से मुक्त है।**

सत्यानन्द मुंजाल (मैनेजिंग ट्रस्टी/प्रधान) **शिवराजवती आर्या** (उप-प्रधाना) **रामनाथ सहगल** (मन्त्री)

समाचार दर्पण

ऋषि दयानन्द जन्मभूमि टंकारा में श्री महर्षि दयानन्द अन्तर्राष्ट्रीय उपदेशक महाविद्यालय टंकारा का 48वां स्थापना दिवस समारोह सम्पन्न

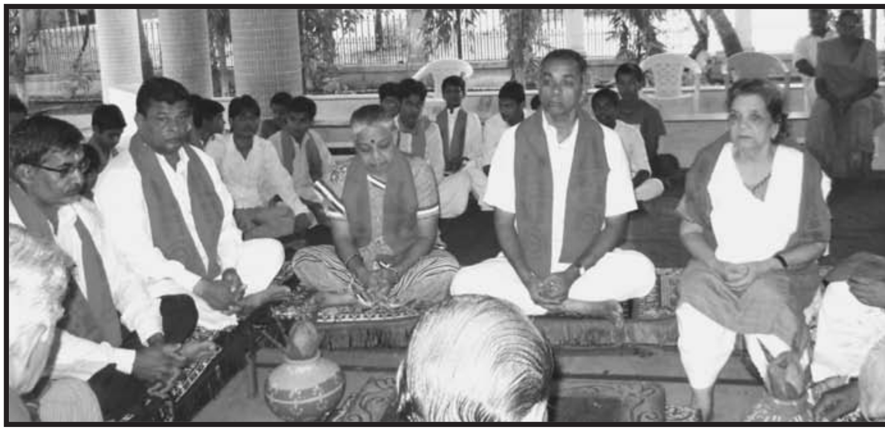

17 जुलाई श्री महर्षि दयानन्द अन्तर्राष्ट्रीय उपदेशक महाविद्यालय टंकारा का 48 वां स्थापना दिवस है। विद्यालय में पढ़ने वाले सभी ब्रह्मचारी एक महीने से स्थापना दिवस मनाने की तैयारी में लग गये थे। अलग अलग टोलियां बनाकर कुछ विशेष यज्ञ और स-स्वर वेदपाठ का अभ्यास कर रहे थे, कुछ पुरे परिसर की सफाई एवं साज-सज्जा में लगे हुए थे। कुछ लाठी, कराटे, योगासन आदि के अभ्यास में लगे थे।

लगभग 25 ब्रह्मचारी नये थे वे भी पुराने ब्रह्मचारियों के मार्गदर्शन में अपना योगदान दे रहे थे। 17 जुलाई बृहस्पतिवार को प्रात: से ही सुसज्जित यज्ञशाला में विशेष यज्ञ का प्रारम्भ हुआ। मुख्य यजमान पद पर समीप के गांव पडधरी के प्रधान डॉ. डाह्याभाई स-परिवार बैठे थे। श्री डाह्याभाई आर्य परिवार से हैं, आपके घर पर नियमित यज्ञ होता है। आपके प्रभाव के कारण आसपास के कई गांव में टंकारा गुरुकुल के ब्रह्मचारियों को लगभग हर दूसरे दिन यज्ञ-संस्कारों के लिए निमन्त्रण मिलते रहते हैं तथा परिवारों में मृत्यु के बाद की पौराणिक परम्पराएं समाप्त होती जा रही है। डॉ. साहब चित्तौड़ गुरुकुल के स्नातक है।

साथ में टंकारा नगर के प्रधान श्री धर्मेशभाई त्रिवेदी, राजकोट, मोरबी, जामनगर, महाराष्ट्र की आर्यसमाजों के पदाधिकारी तथा टंकारा के गणमान्य लोग भी यजमान पद पर बैठे थे। आचार्य रामदेव जी ब्रह्मा के आसन पर विराजमान थे। यज्ञ के पश्चात् ब्रह्मचारियों के भजन-प्रवचनों के कार्यक्रम हुए जिससे उपस्थित लोग अत्यन्त प्रभावित हुए। सब का कहना था कि आर्यसमाज का भविष्य इन ब्रह्मचारियों के हाथों में सुरक्षित है। तदोपरान्त विभिन्न आर्यसमाजों के पदाधिकारियों तथा गणमान्य अतिथियों का पीत-वस्त्र से स्वागत किया गया।

पश्चात् लाठी, कराटे, योगासन तथा पिरामिड आदि का प्रदर्शन भी ब्रह्मचारियों ने दिखाकर शास्त्र एवं शस्त्र विद्या का कैसा समन्वय टंकारा गुरुकुल में होता है यह प्रत्यक्ष दिखाया। ब्रह्मचारियों के प्रदर्शन पर लोगों ने नगद पुरस्कार देकर प्रोत्साहन दिया। अन्त में ऋषि लंगर के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

ऋषि जन्मस्थान के सहयोगी सदस्य बनें

आर्य समाज के ऐतिहासिक स्थलों में टंकारा (ऋषि जन्मस्थान) का एक विशेष महत्त्व है। प्रतिवर्ष शिवरात्रि के दिन ऋषि बोधोत्सव के अवसर पर ऋषि भक्त यहाँ पधारते हैं। प्रत्येक ऋषि भक्त अपनी श्रद्धा और विश्वास के साथ यहाँ अपनी श्रद्धांजलि उस ऋषि को देता है। कुछ ऋषि भक्त यहां कई वर्षों से पधार रहे है यह भी उस ऋषि के प्रति श्रद्धा का रूप है।

उपस्थित ऋषि भक्त आग्रह करते हैं कि इस स्थान से कैसे जुड़ा जाए जिससे ऋषि घर से आत्मीयता बनी रहे। पिछले वर्ष ट्रस्ट ने निर्णय लिया है कि वार्षिक सहयोगी सदस्य बनाए जाए। प्रत्येक इच्छुक ऋषि भक्त प्रतिवर्ष 1000/- रूपये देकर सहयोगी सदस्य बन सकते हैं। इस सहयोग राशि की स्थिर निधि बनाई जाए और उसके ब्याज को ट्रस्ट गतिविधियों में लगाया जाए। एक करोड़ की इस स्थिर निधि के अधिक-से-अधिक सहयोगी सदस्य बनकर/बनाकर ऋषि जन्मस्थान से जुड़ सकते हैं। 10000 सदस्य पूरे भारत से बनाने का लक्ष्य है। **टंकारा ट्रस्ट को दी जाने वाली राशि आयकर से मुक्त है।**

निवेदक

सत्यानन्द मुंजाल	**शिवराजवती आर्या**	**रामनाथ सहगल**
(मैनेजिंग ट्रस्टी/प्रधान)	उप-प्रधाना	(मन्त्री)

दो दिवसीय वैदिक प्रचार

छत्तीसगढ़ प्रान्त के कोरबा जनपद में ''कोरबा सुपर थर्मल पावर स्टेशन'' ब्र. राजेन्द्रार्य, (सोनभद्र (उ.प्र.) ने वैदिक धर्म प्रचार हेतु वृहद ''देवयज्ञ'' सम्पादित किया तथा यज्ञोपरान्त ''पञ्चमहायज्ञों का गृहस्थाश्रम में महत्त्व'' विषय पर प्रेरणादायक प्रवचन रखा। दूसरे दिन यज्ञोपरान्त ब्रह्मचारी जी का 'यज्ञ की वैज्ञानिक एवं पर्यावरण' विषय पर प्रवचन हुआ। धर्म जिज्ञासुओं द्वारा पूछे गये यज्ञ, पूजा, उपनयन, आशीर्वाद आदि से सम्बन्धित प्रश्नों के सन्तोषजनक उत्तर ब्रह्मचारी जी ने प्रमाण पूर्वक दिये।

युवा-चरित्र निर्माण एवं शिविर सम्पन्न

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के आह्वान पर आर्य समाज जयपुर के तत्वावधान में स्थानीय जी.एल. सैनी कॉलेज ऑफ नर्सिंग के प्रांगण में आर्य युवा चरित्र निर्माण एवं व्यक्तित्व विकास शिविर सम्पन्न हुआ। शिविर का उद्‌घाटन ध्वजारोहण के साथ वैदिक आश्रम पिपराली, सीकर के अधिष्ठाता एवं सांसद स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती ने किया। 25 युवा शिविरार्थियों को शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक विकास हेतु आसन, जूड़ो-कराटें, मार्शल आर्ट, सैनिक शिक्षा व लाठी प्रचालन का प्रशिक्षण, निपुण प्रशिक्षक-गण सर्व श्री रामकृष्ण शास्त्री, हेमन्त रामबाबू आर्य व हिमांशु के निर्देशन में हुआ। समापन सत्र में सीखी विद्याओं का प्रदर्शन किया जिन्हें उपस्थित दर्शकगण ने करतल ध्वनि से सराहा।

आर्यसमाज गांव की ओर

आर्यसमाज राम पुरा कोटा (राजस्थान) द्वारा 116वां वार्षिकोत्सव मनाया गया। 10 दिवसीय कार्यक्रम में इस बार 9 कार्यक्रम गांवों में रखे गये तथा महर्षि दयानन्द एवं वेद वाणी को जन-जन तक पहुँचाने का एक ऐतिहासिक कार्यक्रम किया गया। प्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री भूपेन्द्र सिंह एवं उनके सहायक श्री लेखराज शर्मा ने भजनों एवं उपदेशक के माध्यम से गांव में प्रचलित कुरीतियों पर प्रहार किया। ईश्वर का स्वरूप एवं धर्म के उपर बताया।

पं. रामप्रसाद बिस्मिल जयन्ती पर सम्मान समारोह

अध्यात्म पथ (पंजी) मासिक पत्रिका द्वारा पं. रामप्रसाद बिस्मिल की जयन्ती के अवसर पर भव्य आयोजन आर्यसमाज बी-ब्लॉक, जनकपुरी, नई दिल्ली में किया गया। कार्यक्रम का संयोजन वैदिक विद्वान आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री ने किया। आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री जी ने जनसमूह को संबोधित करते हुए कहा कि पं. रामप्रसाद बिस्मिल भारत के महान क्रांतिकारी, अग्रणी स्वतंत्रता सेनानी व उच्च कोटि के कवि व साहित्यकार थे। उन्होंने हिन्दुस्तान की आजादी के लिए अपने प्राणों की आहुति दी।

इस समारोह में यशस्वी लेखक डॉ. सुन्दरलाल कथूरिया को अध्यात्म मार्तण्ड सम्मान से विभूषित करते हुए प्रशस्तिपत्र, प्रतीक चिह्न एवं शाल भेंट की। अध्यात्म रत्न सम्मान से सर्वश्री कन्हैयालाल आर्य, विजयगुप्त, चन्द्रकान्ता, अमर सिंह आर्य को सम्मानित किया गया तो विद्यासागर नांगिया स्मृति सम्मान से हरबंशलाल कोहली को सम्मानित किया गया।

आदर्श जीवन निर्माण शिविर सम्पन्न

आर्य प्रतिनिधि सभा मुम्बई के तत्वावधान में आर्य वीर दल मुम्बई ने ''आदर्श जीवन निर्माण शिविर'' का आयोजन आर्यसमाज सान्ताक्रुज में किया। यज्ञ के उपरान्त शिविर का उद्‌घाटन एवं ध्वजारोहण प्रसिद्ध उद्योगपति एवं आर्यश्रेष्ठी श्री लद्धाभाई विश्राम पटेल, (घाटकोपर) के करकमलों से हुआ। इस शिविर के मुख्य शिक्षक श्री धर्मेन्द्र आर्य मुम्बई, श्री प्रशान्त आर्य अलीगढ़ एवं श्री हरेन्द्र आर्य मुजफ्फरनगर थे। आदर्श जीवन निर्माण शिविर के अन्तर्गत शारीरिक, आत्मिक व बौद्धिक उन्नति के लिए अनेक विद्वानों को आमन्त्रित करके विभिन्न विषयों पर मार्ग दर्शन दिया गया यथा-उत्तम विद्यार्थी बनाना, स्मरणशक्ति बढ़ाना, व्यक्तित्व विकास, आत्मविश्वास पैदा करना, तनाव से मुक्ति, योग प्राणायाम, ध्यान, आसन, स्वस्थ निरोग रहने के प्रभावी सूत्रों पर तथा सैद्धान्तिक, सारगर्भित एवं प्रभोवोत्पादक प्रवचनों से शिविरार्थियों को लाभान्वित किया गया।

प्रतियोगिता आयोजित

र्आ समाज खेड़ा अफगान सहारनपुर में वैदिक संस्कृति उत्थान न्यास द्वारा प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। प्रतियोगिता में गायत्री मन्त्र और आर्य समाज के नियमों के मौखिक उच्चारण किया गया। जिसमें सर्वप्रथम यज्ञ का आयोजन किया गया। उदित कुमार गुप्त, मदन पाल, अरूण कुमार ने क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय पुरस्कार प्राप्त किया शेष सभी प्रतिभागियों को सांत्वना पुरस्कार के रूप में साहित्य प्रदान किया गया। वैदिक संस्कृति उत्थान न्यास के प्रधान आदित्य प्रकाश गुप्त ने कहा कि ये नियम मानव मात्र के कल्याण के नियम है और कहा इन्हें अपने जीवन में उतारने वाला कभी भी धोखा नहीं खायेगा।

हम क्या करें?

एक तो निकम्मे न रहें। समय बचायें। समय का सदुपयोग करें। समय का संयोजन करें। हमारा काफी समय अनावश्यक खर्च हो जाता है। कितनी देर फोन में बातें की, कितनी गप शप लगाई, कितनी देर आराम किया या सोने में बिताया। पिक्चर, टी.वी. तो 'टाइम पास' के लिए देखा है। अपने आप को स्वस्थ रखने में समय दें। समय बहुत कम है। धन कमाने में भरपूर समय देते हैं। थोड़ा सोचें, विचारें! हम कैसे समय बिता रहें हैं।

हमें सत् साहित्य पढ़ना चाहिये। कुछ समय श्रवण, मनन करना चाहिए। हाँ! जप करना तो जीवन की प्राथमिकता होनी चाहिए। समय बहुत कीमती है। बहुत कम बचा है। कितने वर्ष निकल गये। कैसे बीते, पता ही नहीं। क्या विशेष किया इतने वर्षो में? क्या हमने सेवा के लिए समय दिया? स्वयं के लिए, परिवार के लिए अपने पास पड़ोस, गांव, समाज देश के लिए समय निकाला? खैर! अब तो सावधान हो जायें! नहीं तो यह दिन भी यूं ही चला जायेगा। समय का सदुपयोग सत्संग पथ पर चलने से ही सम्भव है।

टंकारा से चिट्ठी आई है

मैं टंकारा में बड़ा अच्छा समय गुजार कर दिल्ली वापिस आ रही हूँ। यहां गुरुकुल के विद्यार्थी ग्रीष्मकालीन अवकाश के कारण बहुत कम थे, किन्तु फिर भी रौनक थी, गर्मी बहुत अधिक है, किन्तु हवाएं चलती रहती हैं, कुछ भी कहें पर पता नहीं इस टंकारा की धरती में क्या आकर्षण है कि हर वातावरण में मन सुखी ही रहता है।

अपनी योजना के अनुसार मैंने सिलाई केन्द्र को अन्तिम 2 कमरों में शिफ्ट कर दिया है और यहां बहुत अच्छी व्यवस्था हो गई है, सब मशीनें, टेबल आदि ठीक प्रकार से रखे हैं और अब एक वैल ऑरगेनाईजड स्कूल लगता है। नयी लड़कियां भी आ रही है और 20 लड़कियां पहले ही परीक्षा की तैयारी में हैं। परीक्षा अब जून में न होकर जुलाई 22 से 26 तक है, मैंने परीक्षा के लिए सब कुछ व्यवस्थित करवा दिया है।

आशा है इस वर्ष लड़कियों की संख्या काफी अधिक होगी तो आवश्यकता पढ़ने पर एक जूनियर टीचर रख लेंगे। 2 मशीनों में मोटर लगवा दी गई है और कैचियां आदि खरीद ली है, इस समय हमारी 17 मशीने बिल्कुल ठीक चल रही हैं और इस समय और कोई आवश्यकता नहीं है। कुछ सूट का कपड़ा खरीद कर हंसा को दे दिया है। परीक्षा के बाद ड्रेस डिजाईनिंग वाली लड़कियों से कढ़ाई करवा देंगी।

240 मीटर केसरी कपड़ा खरीद कर आचार्य जी को दे दिया है, ठीक समय पर वह हंसा को दे देंगे और पीत वस्त्र और शोल्डर वैग बन जायेंगे। सिलाई केन्द्र में बना पूरा स्टाक मैंने चैक करके गिनती करवा के अलमारी में रखवा दिया है। पगड़ी और दुपट्टे भी संभाल कर रखवा दिए है। हर काम की पूरी रिपोर्ट बना कर आचार्य जी को दे दी है।

बाकी गुरुकुल के सारे काम सुचारू रूप से चल रहे हैं, पाचक जो खाना बनाता है अच्छा बना रहा है और रोटी बनाने वाली मशीन से बड़ी अच्छी रोटी बन रही है। नये विद्यार्थी आ रहे हैं। अब थोड़ी क्लासें भी शुरु हो गई हैं।

टंकारा समाचार
के प्रसार में सहयोग दें

'टंकारा समाचार' उलट-पलटकर रख देने लायक नहीं, बल्कि गंभीरतापूर्वक पढ़ने लायक पत्रिका है। यदि आप इसे पढ़ेंगे तो हमें विश्वास है कि पसन्द भी करेंगे और चाहेंगे कि इसे और लोग भी पढ़ें। कृपया अपने जैसे गम्भीर पाठकों से 'टंकारा समाचार' की चर्चा करें, उन्हें इसका ग्राहक बनने के लिए प्रेरित करें।

'टंकारा समाचार' का वार्षिक शुल्क 100/- रूपये एवम् आजीवन शुल्क 500/- रूपये हैं।

आप उपरोक्त राशि श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा, के नाम से चैक/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर, आर्य समाज (अनारकली), मंदिर मार्ग, नई दिल्ली-110001 के पते पर भिजवा कर सदस्य बन सकते हैं।

शेष मिल कर चर्चा करूंगी। मेरा यहां समय बहुत अच्छा व्यतीत हुआ, किसी किस्म की भी कोई तकलीफ नहीं हुई। प्रातः एवं सायं मौरे की चहचहाट में यज्ञ करने का आनन्द की कुछ ओर से, उत्सव के दिनों में यह आनन्द प्राप्त नहीं हो पाता। ऋषि भक्तों को सुझाव है कि अगर ऋषि जन्मभूमि का आनन्द लेना हो तो उत्सव के दिनों के अतिरिक्त भी यहां आवें। **- राज लूथरा**

(राज लूथरा जी वर्ष में चार बार टंकारा में एक-एक माह रहती हैं और सेवा कार्य करती है। सम्पादक)

(पृष्ठ 1 का शेष)

थे। वे मानते थे कि वनों में उत्पन्न वन सम्पदा, लकड़ी आदि पर ग्रामीण जनता का अधिकार है। वे अदालतों में उन कानूनों को आपत्तिजनक मानते थे जिनसे न्याय की प्रक्रिया अवरूद्ध होती है। रजिस्ट्री कराने पर भारी रकम चुकाना, स्टैम्प ड्यूटी में बढ़ोत्तरी आदि जनविरोधी अदालती आदेशों की उन्होंने खुलकर खिलाफत की थी।

महात्मा गांधी ने तो स्वेदशी वस्तुओं, विशेषत घर की बनी खादी के प्रयोग पर बहुत बाद में बल दिया, किन्तु हम देखते हैं कि स्वामी दयानन्द की शिक्षाओं से प्रभावित पंजाब के शिक्षित वर्ग ने आर्य समाज में आकर स्वदेशी वस्त्र धारण को अंगीकार किया। 19वीं शताब्दी के अन्तिम दशक में हम देखते हैं कि वयोवृद्ध आर्य लाला साईदास, पैन्शनर जीवनदास, युवा अधिकारी लाला मूलराज, युवा वकील लाला लाजपत राय आदि शतशः लोगों ने स्वदेशी वस्त्रों को स्वयं अपनाया तथा इसका प्रचार किया। दयानन्द ने तो जर्मनी के एक शिक्षा विशेषज्ञ से पत्राचार कर यह योजना बनाई थी कि वे शीघ्र ही भारत के युवकों को पश्चिमी कला-कौशल, विज्ञान तथा उद्योग व्यवसाय की शिक्षा देने के लिए जर्मनी भेजेंगे।

गांधी जी की भांति दयानन्द ने भी गोरक्षा तथा हिन्दी के प्रचार को राष्ट्रीय भावना को बढ़ाने में उपयोगी माना था। गौ रक्षा के आर्थिक पहलू पर जोर देकर उन्होंने गौ वध की हानियों का विस्तार से विवेचन अपने ग्रन्थ गोकरूणानिधि में किया। वे शिक्षा में मातृभाषा तथा राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रयोग के प्रबल पक्षपाती थे। विद्यालयों में हिन्दी शिक्षा का आह्वान करने हेतु उन्होंने शिक्षा कमीशन के अध्यक्ष मि. हैमिल्टन को पत्र भेजे। आर्य समाज की राष्ट्रीय भावना समयान्तर में उस समय प्रत्यक्ष हुई जब कांग्रेस ने आजादी की लड़ाई लड़ी तथा उसमें आर्य समाज के अनुयायियों ने बढ़ चढ़कर भाग लिया। स्वामी दयानन्द साम्प्रदायिक सौहार्द के कट्टर समर्थक थे। उनकी मित्र मंडली में सर सैयद अहमद खां जैसे मुस्लिम सुधारक, राजस्थान के पत्रकार मौलवी मोहम्मद मुराद अली तथा बरेली के पादरी डॉ. स्काट जैसे लोगों की पहचान हुई है। वे धार्मिक मामलों में सहनशीलता के पक्षपाती थे तथा मजहबी मसलों को बौद्धिक स्तर पर सुधारने या निपटाने के पक्षधर थे। उन्होंने राजाओं से लेकर निम्न वर्ग तक को राष्ट्रहित के लिए प्रेरित किया। उनके राष्ट्रवाद का ही परिणाम था कि क्रान्तिकारी राम प्रसाद बिस्मिल तथा अशफाकुल्ला खां जैसे देशभक्तों ने स्वदेश के लिए फांसी का फंदा चूमा।

(पृष्ठ 8 का शेष)

लिखा गया है यह भी इस व्याकरण की विशेषता है-वर्तमान काल में जो सर्वाधिक प्रामाणिक व्याकरण है वह आचार्य पाणिनि का व्याकरण है मैं यहाँ-यह कहना चाहता हूँ कि इस पूरे व्याकरण के 14 मूल सूत्र हैं। (अइउण् आदि) ये चौदह व्याकरण के मूल सूत्र भगवान् शिव की देन है यद्यपि भगवान् शंकर का बनाया हुआ व्याकरण परक ग्रन्थ तो अभी उपलब्ध नहीं है लेकिन हम चौदह सूत्रों के बिना कोई भी व्याकरण नहीं बना सकते। आज भी इन सूत्रों को ''माहेश्वर सूत्र'' कहा जाता है माहेश्वर सूत्रों के निर्माण की कहानी बहुत पुरानी है इसलिए तरह-तरह की किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं, उनमें से एक किंवदन्ती है कि भगवान् शंकर जब ''ब्रह्म साक्षात्कार'' जैसी बड़ी समाधियों से उठते थे तो उन्हें अभूतपूर्व आनन्द की अनुभूति होती थी। ऐसे में वे अपने आपको वश में नहीं रख पाते थे वे उठकर डमरू बजाने लगते और नृत्य की विधि स्वीकार कर लिया गया और कुछ लोगों ने तो यह भी कहा कि नृत्य के आदि प्रचर्तक भी भगवान् शिव ही हैं। भगवान् शिव के डमरू से जो ध्वनि उत्पन्न हुई वही ध्वनि व्याकरण के सूत्रों की ध्वनि स्वीकार की गई इस प्रकार भगवान् शिव के जितने उपकार मनुष्य जाति पर हैं उनमें व्याकरण के मूल रचनाकार भी भगवान् शिव ही हैं।

विरोधाभास का एक मनोहर उदाहरण इनके जीवन में देखें-भगवान् शिव के हाथ में त्रिशूल हैं, डमरु हैं, जटाओं में चन्द्रमा है और गले में जहरीला साँप है, साँपों में सर्वाधिक विषैले साँप ''नाग'' श्रेणी के साँप हैं। भगवान् शिव के बड़े पुत्र श्री गणेश हैं इनका ऐश्वर्य भी विशाल है लेकिन इनकी सवारी के रूप में प्रसिद्ध एक चूहा इनके पास में हरदम दिखाई देता है, भगवान् शिव के दूसरे पुत्र हैं, कार्तिकेय इनका वैभव अतुलनीय है पूर्वोतर भारत में जो स्थान श्रीगणेश का है दक्षिण भारत में वही स्थान भगवान् कार्तिकेय का है कार्तिकेय को षडानन कहा जाता है और इनकी सवारी है मोर।

अब विषय पर आ जाइये-विरोधाभास का एक उदाहरण देखें कि एक ऐसा घर है जिसमें एक के पास साँप है, दूसरे के पास चूहा है और तीसरे के पास मोर है-इस तरह साँप, चूहा और मोर। यहाँ देखें कि ये तीनों एक दूसरे के शत्रु हैं चूहा साँप का भोजन है, और साँप मोर का भोजन है, मगर तीनों का एक ही घर है घर भले ही भोलेनाथ का हो, छोटा या बड़ा लेकिन तीन जीव और तीनों एक दूसरे के शत्रु हैं-अब प्रश्न होता है कि यह कैसे संभव है? हाँ, यह सब अनुशासन से संभव है और इनके कुछ गूढ़ रहस्य इस प्रकार हैं-'साँप'-इन बातों या कार्यो का प्रतिनिधि है जिनको करने पर विष का सा घूँट पीकर रहना पड़ता है, घर-घर की तो यही कहानी है-जिन घरों में बहू को उचित स्थान नहीं मिलता वे घर का सारा काम भी करती है और उन कार्यो को भी करती हैं जिन्हें वे पसन्द नहीं करती बस, उन्हें कर्तव्य समझ कर करती हैं और विष का सा कड़वा घूँट पीकर रह जाती हैं-उनकी प्रशंसा करना तो बहुत दूर उनके कार्यों की समीक्षा भी नहीं की जाती। यह गले में पड़े हुए सॉप की तरह है। जिसे घर में बड़े सदस्यों के सामने सहन करना पड़ता है जिसका मकसद है घर की शान्ति। इसी प्रकार व्यक्ति के जीवन में कुछ रहस्यात्मक तथ्य होते हैं उन्हें छिपाकर रखना पड़ता है यह बात हमें चूहे से सीखनी है, हमें हरदम चौकन्ने रहना है, कौन सी बातें प्रकट करने योग्य है और कौन सी नहीं, इस बात का बराबर ध्यान रखना चाहिए इसी प्रकार कार्तिकेय का वाहन है मोर-इस सन्दर्भ में यह ध्यान रखना चाहिए कि हम भले ही दूसरों के सम्मुख चमक दमक के साथ पेश आये लेकिन उड़ना (अभिमानी होना) ठीक नहीं, मोर के शरीर के पंखों को भगवान् ने खूबसूरत बनाया है-लोग देखकर प्रभावित होते हैं पूरी प्रकृति अपने स्वरूप पर इतराती है, घनघोर जंगल में भी मोर का नृत्य मंगलभाव उत्पन्न कर देता है वैसे ही हमारी प्रतिभा भी जंगल में मंगल करने की है लेकिन मोर अपने नृत्य के उपरान्त थक जाता है और उसकी दृष्टि अपने पैरों पर पड़ती है जिन्हें देखकर वह रोता है चिल्लाता है कभी स्वयं को और कभी स्वयं के भाग्य को कोसता है। हमारे जीवन में भी ऐसी ही स्थिति यदा-कदा बनती है हम अपने रंगरूप एवं गुणों के कारण आसमान में उड़ने को तैयार हो जाते हैं लेकिन भूमि से अधिक ऊपर उठने का हमारा सामर्थ्य नहीं है, हम चाहते हैं कि हम आगे बढ़ें, उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़े, लेकिन अपनी संस्कृति, अपनी धरोहर अपने माता-पिता एवं अध्यापकों के प्रति आदर-भाव को कभी न भूलें-जो इस मूलभाव को भूल जाते हैं वे अपने पैरों को देख रोते हैं, अपनी गति को देख रोते हैं कि हमने उन्नति तो की है लेकिन उन मान्यताओं को भी छोड़ बैठे जिन मान्यताओं को साथ लेकर चलना था जिनके साथ आगे बढ़ना था।

इस प्रकार हमारा जीवन तमाम विरोधाभासों से भरा पड़ा है इसमें अपार सुख और दुःख भरा पड़ा है। हमारे देश की यह संस्कृति है कि हम अपने सुख और दुःखो को मिल बाँटकर पूरा कर लेते हैं और जीवन में सुख दुःख भोगते हैं लेकिन दूसरे देशों में लोग सुख और दुःख को अकेले भोगते हैं जो कि विशेष दुःख का कारण बनता है। भारतवर्ष की धारोहर है समाजवाद, हमारे देश की संस्कृति है कि प्रत्येक सुख या दुःख को मिलकर बाँट लेना। हम अपने सुख या दुःख में दूसरों का सहयोग अथवा सहानुभूति चाहते हैं तो हमारा भी दायित्व है हम भी दूसरों के सुख-दुःख में सम्मिलित हों ऐसा करने से जीवन सहज हो जाता है, यही सहजता मानसिक शान्ति का कारण बनती है हमारी चाहत है-हमारा मन-मस्तिष्क परिवार, समाज व राष्ट्र में खुशहाली बरकरार रहे।

अनेकता में एकता,
ही हमारी शान है।
इसीलिए
मेरा भारत महान है।

लेखक की नवीनतम पुस्तक नये आकाश की तलाश से साभार

इंगलिश में एक कहावत है -''There is no subsitute of hard work''. ''कड़ी मेहनत का कोई विकल्प नहीं होता।'' दुनिया में जितने भी बड़े आदमी हुए हैं यदि उनके जीवन को देखें तो पायेंगे कि जीवन में जितनी अधिक बाधाएँ, रूकावटें और परेशानियाँ आई हैं आदमी उतना ही कुशल, मेहनती एवं दूरद्रष्टा हुआ है। इस पुस्तक में ऐसे कुछ उदाहरण एवं चरित्र प्रस्तुत किये हैं जो सुप्त जीवन में ऊर्जा का संचार करने में समर्थ होंगे, जागृत जीवन में गति प्रदान करने वाले सिद्ध होंगे और गतिशील जीवन को चेतना देने का कार्य करेंगे। इस पुस्तक को लिखने का यही उद्देश्य है कि समय का सदुपयोग हो, परिवार, समाज व देश की उन्नति हो, मनुष्य जाति आगे बढ़ने की होड़ में अपने नैतिक कर्तव्य से न हटे, अभाव की ओट में आलसी बनकर न बैंठे, जीवन उन्नति का कारक बने, जीवन में सन्तोष हो, परस्पर भाईचारा हो, माता-पिता एवं आचार्यों का सम्मान हो, आयु वृद्धों एवं ज्ञान वृद्धों के आशीष की चाह हो। इस पुस्तक में कुछ विचारकों एवं समाज सुधारकों के जीवन को प्रस्तुत करने में कुछ लेखकों के विचार भी संकलित किये हैं।

आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली राज्य का त्रैवार्षिक साधारण अधिवेशन सम्पन्न

महाशय धर्मपाल जी सर्वसम्मति से पुनः प्रधान निर्वाचित

आप मुझे ऐसा आशीर्वाद दें कि आर्यसमाज का कार्य और अधिक गति से करता रहूं - महाशय धार्मपाल

दिल्ली की समस्त आर्यसमाजों एवं आर्यसंस्थाओं की केन्द्रीकृत संस्था आर्य केन्द्रीय सभा (दिल्ली राज्य) का साधारण अधिवेशन एवं निर्वाचन को आर्यसमाज कीर्ति नगर नई दिल्ली में सम्पन्न हुआ।

अधिवेशन की कार्यवाही आरम्भ करते हुए सर्वप्रथम महामन्त्री श्री राजीव आर्य जी ने सदन के समक्ष गत तीन वर्षों के कार्य विवरण को पढ़कर सुनाया। श्री अरुण प्रकाश वर्मा जी ने गत वर्षों का आय-व्यय प्रस्तुत किया, जो कि वार्षिक विवरण में भी प्रकाशित किया गया था। उपस्थित सभी सदस्यों ने करतल ध्वनि से विवरण को पारित किया। वार्षिक विवरण के पारित होने पर महाशय धर्मपाल जी ने समस्त प्रतिनिधियों का धन्यवाद किया। श्री राजीव आर्य जी ने दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान ब्र. राजसिंह आर्य जी को निर्वाचन अधिकारी के रूप में आमन्त्रित किया।

आर्य प्रतिनिधियों का आभार व्यक्त करते महाशय जी

निर्वाचन अधिकारी ब्र. राजसिंह आर्य जी ने निर्वाचन की कार्यवाही को आगे बढ़ाते हुए आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली के प्रधान पद के लिए नाम प्रस्तुत करने के लिए उपस्थित प्रतिनिधियों से निवेदन किया। श्री अजय सहगल (सम्पादक, टंकारा समाचार) ने महाशय धर्मपाल जी का नाम प्रधान पद के लिए प्रस्तावित किया।

समस्त प्रतिनिधियों ने हाथ उठाकर महाशय धर्मपाल जी का अनुमोदन किया जिसमें सर्वश्री शिव कुमार मदान, अरुण प्रकाश वर्मा, कीर्ति शर्मा, मदन मोहन सलूजा, विक्रम नरुला, विद्यामित्र ठुकराल, राजेन्द्र दुर्गा, राजीव आर्य आदि प्रमुख थे।

तत्पश्चात् निर्वाचन अधिकारी ब्र. राजसिंह आर्य जी ने कहा कि यदि कोई और भी नाम हो तो प्रस्तुत करें। जिस पर कोई अन्य नाम प्रस्तुत नहीं हुआ। अतः निर्वाचन अधिकारी ब्र. राजसिंह आर्य जी द्वारा महाशय धर्मपाल जी को पुनः प्रधान चुने जाने की घोषणा की गई। श्री अरुण प्रकाश वर्मा, राजीव आर्य, सत्यानन्द आर्य, श्रीमती उषाकिरण आर्या, अजय सहगल, ललित चौधरी, अभिमन्यु चावला जी ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया तथा सर्वसम्मति से शेष कार्यकारिणी एवं अन्तरंग सभा गठित करने के अधिकार महाशय जी को प्रदान किए गए।

इस अवसर पर श्री विनय आर्य जी ने महाशय धर्मपाल जी का संक्षिप्त परिचय, उनके सेवा कार्यों, आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार एवं दिल्ली सभा के अन्तर्गत अनेकानेक योजनाओं में उनके द्वारा प्रदान किए जा रहे सहयोग की जानकारी दी। उन्होंने कहा कि महाशय जी केवल आर्थिक सहयोग ही नहीं देते हैं अपितु उन संस्थाओं की निरन्तर प्रगति की जानकारी भी प्रतिदिन लेते रहते हैं। उनके जैसा निष्ठावान, कर्त्तव्यनिष्ठ, समाजसेवी, परोपकारी, नौजवान कर्मठ कार्यकर्ता आर्यसमाज को मिलना कठिन है। उन्होंने उपस्थित प्रतिनिधियों के समक्ष प्रस्ताव रखा कि ऐसे कर्मठ अधिकारी को हमें अधिकार देना चाहिए कि वे अपनी टीम का स्वयं गठन करें।

पुनः प्रधान निर्वाचित किए जाने पर महाशय धर्मपाल जी ने दिल्ली की सभी आर्यसमाजों से पधारे प्रतिनिधियों का आभार व्यक्त करते हुए कहा कि मेरा जीवन आर्यसमाज का है। मैंने अपने आपको उसी दिन आर्यसयमाज को समर्पित कर दिया था, जब मेरे पिता महाशय चुन्नीलाल जी मुझे अंगुली पकड़कर आर्यसमाज में लेकर जाते थे। मुझे आर्यसमाज का कार्य करने की प्रेरणा एवं संस्कार उन्हीं से मिले। उन्होंने आगे कहा कि आप सब मुझे ऐसा आशीर्वाद दें कि मैं और भी अधिक गति के साथ आर्यसमाज का कार्य कर सकूं।

उन्होंने आर्यसमाज के प्रचार प्रसार के लिए 21लाख रुपये की राशि से महाशय धर्मपाल एम.डी.एच. के नाम से स्थिर निधि बनाने की भी घोषणा की। श्री विनय आर्य जी ने सदन को जानकारी देते हुए कहा - केरल के कालीकट में महाशय जी की प्रेरणा एवं आशीर्वाद से सार्वदेशिक सभा के निर्देशन में दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के अन्तर्गत लगभग 5 करोड़ रुपये की लागत से महाशय धर्मपाल एम.डी.एच. वेद अनुसंधान केन्द्र की स्थापना की जा रही है, जिसका शिलान्यास दिनांक 15 अगस्त को महाशय जी के कर-कमलों से होगा। श्री राजीव आर्य जी ने उपस्थित समस्त सदस्यों का आभार व्यक्त किया।

इतनी सी बात हवाओं को बताये रखना
रौशनी होगी चिरागों को जलाए रखना
लहू देकर की है जिसकी हिफाजत हमने
ऐसे तिरंगे को हमेशा अपने दिल में
बसाए रखना

टंकारा समाचार अगस्त, 2014

Delhi Postal R.No. DL (ND)-11/6037/2012-13-14

अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसेंस नं० U(C) 231/2012-14

Posted at Patrika Channel, Delhi R.M.S. on 1/2-8-2014

R.N.I. No 68339/98 प्रकाशन तिथि: 23.07.2014

मुद्रक व प्रकाशक–रामनाथ सहगल द्वारा मयंक प्रिंटर्स, 2199/63, नाईवाला, करोल बाग, नई दिल्ली–5 मोबाइल: 9810580474 से छपवाकर कार्यालय महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा, आर्य समाज (अनारकली), मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–1 दूरभाष : 23360059, 23362110 से प्रकाशित। संपादक : अजय